www.thearyasamaj.org

R.N.I. No. 2321/57
फरवरी 2017
ओ३म्
रजि. सं. MTR नं. 04/2016-18
अंक 1

तपोभूमि

मासिक

महर्षि दयानन्द सरस्वती

विष को पीकर अमृत बाँटा। तेरा ऋणी रहे संसार।।

(ऋषि बोधोत्सव)

www.thearyasamaj.org

स्वामी दयानन्द सरस्वती

रचयिता: नाथूराम शंकर शर्मा

जहाँ घोषणा राम के नाम की है,
जहाँ कामना कृष्ण के काम की है।
अहिंसा जहाँ शुद्ध बुद्धार्य की है,
प्रशंसा जहाँ शंकराचार्य की है।
वहाँ देव ने दिव्य योगी उतारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।१।

अनायास चेता गया एक चूहा,
गिरी भूल, ऊँची चढ़ी उच्च ऊहा।
जड़ीभूत भूतेश की भक्ति भागी,
महादेव के प्रेम की ज्योति जागी।
उठे इष्ट की ओर सीधे सिधारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।२।

हितू, बन्धु, माता, पिता, मित्र छोड़े,
लगे मुक्ति की खोज में बन्ध तोड़े।
भले भोग त्यागे, गही योग शिक्षा,
फिरे देश में माँगते धर्म-भिक्षा।
बने भद्रिका भारती के दुलारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।३।

टिका टेक ठाना उसी ठौर जाना,
जहाँ ठीक पाना सुना था ठिकाना।
मिले योगियों से निकाली कचाई,
मिटा अन्ध विश्वास सूझी सचाई।
कहाये 'विरजानन्द' के शिष्य प्यारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।४।

मनोभावना साधना से मिलादी,
सुधा ध्यान को धारणा की पिलादी।
समाधिस्थ हो ब्रह्म में लौ लगाई,
मिली सम्पदा सिद्धियों की न भाई।
टिके एकता में मिटा भेद सारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।५।

निहारी महा चेतना की महत्ता,
उसी में जुड़ी जानली जीव-सत्ता।
उघारी उपादान की योग माया,
जगज्जाल में तीन का मेल पाया।
बसे विश्व की विश्वता से न न्यारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।६।

रहे आदि से अन्त लों ब्रह्मचारी,
पढ़ी वेदविद्या, अविद्या विसारी।
कहा सज्जनों से बनो स्वर्ग-भोगी,
भजो सच्चिदानन्द को मुक्ति होगी।
न होना कभी आलसी यों पुकारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।७।

ढके ढोंगियों का किया ढाँच ढीला,
लताड़ी छुआछूत की छद्म लीला।
दिखा दोष पाखण्ड का खोज खोया,
खलोपाड़ खोटे खलों को बिगोया।
प्रमादी पछाड़े किसी से न हारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।८।

प्रसादी सदा प्रेम की बाँटते थे,
घृणा से किसी को नहीं डाँटते थे।
सजीला सदाचार को जानते थे,
न चोखा किसी चिन्ह को मानते थे।
कभी वस्त्र धारे कभी थे उघारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।९।

न खाता किसे काल-कूटस्थ-अत्ता,
बही सिन्धु में बूँद की भक्तिमत्ता।
'दिया' न्याय का नीचता ने बुझाया,
दया और आनन्द का अन्त आया।
दिवाली हुई हाय, होली, पजारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।१०।

www.thearyasamaj.org

तपोभूमि

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्0)

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका

(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–63 संवत्सर 2073 फरवरी 2017 अंक 1

संस्थापक
स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

संपादक:
आचार्य स्वदेश
मोबा. 9456811519

फरवरी 2017

सृष्टि संवत्
1960853117

दयानन्दाब्द: 193

प्रकाशक
सत्य प्रकाशन
आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग
मसानी चौराहा, मथुरा
(उ0 प्र0)
पिन कोड–281003

दूरभाष:
0565–2406431
मोबा. 9759804182

अनुक्रमणिका

लेख–कविता		पृष्ठ संख्या
वेदवाणी	–डॉ0 रामनाथ वेदालंकार	4
माता शेरां वाली और भगवती जागरण	–स्वामी अखण्डमण्डनानन्द	5–9
मनुष्य मात्र की सहायता करना	–बाबू दयाचन्द्र गोयलीय	10–13
कुटुम्ब	–श्यामसुन्दर दास	14–17
भोजन और वस्त्रादि	–डॉ0 गोकुलचन्द नारंग	18–19
ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र	–पुरुषोत्तमदास	20–23
सुघड़ता, कार्य–कुशलता	–हरनामदास	24–25
बड़प्पन की नहीं, महानता की.....	–	26
जीवन का महत्व समझें	–	27–28
सूफी अम्बाप्रसाद	–	29–30
राजपथ है बनाया दयानन्द ने	–शान्ती नागर	31
त्रिविध ब्रह्मचर्य	–लक्ष्मणनारायण गर्दे	32–34

❋❋❋

वार्षिक शुल्क 150/– पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 1500/– रूपये

www.thearyasamaj.org

वेदवाणी

लेखकः डॉ० रामनाथ वेदालंकार

राष्ट्र के सेनाध्यक्ष की नियुक्ति

युनज्मि त उत्तरावन्तमिन्द्रं येन जयन्ति न पराजयन्ते।
यस्त्वा कर देकवृषं जनानामुत राज्ञामुत्तमं मानवानाम्।। अथर्व0 4.22.5

शब्दार्थः-

हे राजन्! (ते) तेरे लिए (उत्तरावन्जतम्) उत्कृष्ट क्षात्रनीति और क्षात्रशक्तिवाले (इन्द्रम्) प्रधान सेनाध्यक्ष को (युनज्मि) नियुक्त करता हूँ, (येन) जिससे (जयन्ति) विजय ही प्राप्त करते हैं, (न पराजयन्ते) पराजित नहीं होते, (यः त्वा) जो तुझे (जनानाम्) जनों में (एकवृषम्) अद्वितीय सम्राट् (करत्) करे, (उत) और (राज्ञाम्) राजाओं में तथा (मानवानाम्) मानवों में (उत्तमम्) सर्वोत्तम (करत्) करे।

भावार्थः-

हे सम्राट्! आपके अभिषेक से हमारा राष्ट्र 'राजन्वान्' हो गया है। आपकी चलायी हुई चहुँमुखी योजनाओं से राष्ट्र का प्रचुर विकास होगा। प्रत्येक क्षेत्र में राष्ट्र आगे बढ़ेगा। कल-कारखाने लगेंगे, कृषि की प्रचुरता होगी, वैज्ञानिक उन्नति होगी, जीवन-रक्षा की वस्तुओं औषध, खाद्य, पेय, तैल आदि की व्यापक पैदावार होगी। वैदिक धर्म की रक्षा होगी, शिक्षा चरम शिखर पर पहुँचेगी, चरित्र पूजास्पद होंगे, हिंसा-चोरी आदि पर कठोर नियन्त्रण होगा, सत्य-अहिंसा आदि का बोलबाला होगा। अराजकता दूर होगी, ब्राह्मणत्व-राजत्व और वैश्यत्व चमकेगा, दीन-दुखियों की सहायता होगी।

अब राष्ट्र के लिए एक सुयोग्य प्रधान सेनाध्यक्ष की नियुक्ति आवश्यक है। मैं ऐसे क्षात्रनीति और राजनीति में पारंगत प्रधान सेनापति की आपके साथ नियुक्ति करता हूँ, जिसके आधिपत्य में सैनिक योद्धागण विजय ही विजय पायेंगे, कभी पराजय का मुँह उन्हें नहीं देखना पड़ेगा, जिसका प्रभाव इतना अधिक होगा कि शत्रु उससे थर-थर काँपेंगे, आक्रमण का साहस ही नहीं कर पायेंगे। जो कोई शत्रु उससे टक्कर लेने आयेगा, वह आपका सहायक होकर आपको विजयी हो करायेगा, वह आपको जयों का 'एकवृष' अर्थात् अद्वितीय सम्राट् बना देगा। वह आपको राजाओं और मानवों में सर्वोत्तम कर देगा।

आओ, इस उत्तरावान् इन्द्र को सेनाध्यक्ष का वेश पहनायें और इसका जयजयकार करें।

❋❋❋

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

माता शेरां वाली और भगवती जागरण

न सोना न सोने देना

लेखकः स्वामी अखण्डमण्डनानन्द

इन वीभत्स प्रथाओं का भयंकर परिणाम

प्रिय पाठकगण! आप भली भांति जानते हैं कि अन्धविश्वासी लोग ऐसी मिथ्या बातों को सत्य समझकर यह कह देते हैं कि यदि पार्वती अपने शरीर से मैल उतार कर एक बालक उत्पन्न कर सकती है, यदि महादेव जी हाथी का सिर काट कर मृत बालक को जिला सकते हैं तो जिस देवी की हम पूजा करते हैं वह किसी मृत व्यक्ति को क्यों नहीं जिला सकती हैं? यही तो कारण था कि कई वर्ष पूर्व दीनानगर, (जिला गुरुदासपुर पंजाब) में साढ़े तीन वर्षीय बालक पृथिवी की निर्मम हत्या कर दी गई। जिस किसी ने यह दु:खद हृदय विदारक, मर्मस्पर्शी एवं रोमांचकारी समाचार सुना या पढ़ा वही आश्चर्य चकित हो गया। सब से अधिक एवं आश्चर्य की बात यह थी कि इस जघन्य कार्य को करने वाले बालक का पिता, उसकी दो बहनें और भाई थे। जैसा कई समाचार पत्रों में यह बात प्रकाशित हुई थी कि बालक के पिता प्रकाशचन्द ने अपने घर में देवी के पूजन, कीर्तन एवं जागरण का आयोजन किया। उपस्थित स्त्री–पुरुषों के सम्मुख यह घोषणा की गई कि देवी जी पूजा पाठ से प्रसन्न हो गई हैं अतः अब बलि देने का समय आ गया है। कहा जाता है कि प्रकाशचन्द ने अपने पुत्र का सिर पकड़ा और उसकी बहन कौशल्या ने बालक की एक टांग और दूसरी बहन माया ने दूसरी टांग पकड़ी। तत्पश्चात् बालक के चाचा परसराम ने दरांती से उसका गला काट दिया। इस भयानक दृश्य को देखकर कई महिलाएं मूर्छित हो गई और कई रोती हुई अपने घरों को वापिस चली गई।

पुलिस के कथनानुसार यह कुकृत्य प्रकाशचन्द ने देवी को प्रसन्न करने के लिये और अपने मृत पिता की आत्मा की शान्ति के लिये किया था। वह अपने तीन पुत्रों की बलि देना चाहता था, किन्तु सौभाग्यवश एक बालक बाहर निकल गया और दूसरे को उसके एक सम्बन्धी श्री साईदास जी ने जिन्होंने पुलिस को पृथ्वी की हत्या की रिपोर्ट की थी) बचा दिया। पुलिस को आता देखकर बहुत से लोग भाग गए। जब पुलिस घटना स्थल पर पहुंची तो बालक के टुकड़े–टुकड़े किये जा चुके थे।

मित्रो! यह बात सर्वविदित है कि आये दिन कई पागल व्यक्ति तथाकथित देवताओं को प्रसन्न करने के लिये और सन्तान उत्पत्ति की प्रबल इच्छा के कारण किसी दुष्ट के कहने पर अपने अड़ौसी–पड़ौसी या निकट सम्बन्धी की अबोध बालिका या बालक की हत्या कर देते हैं, किन्तु अपने पिता अथवा चाचा द्वारा की गई बालक की हत्या कर देते हैं, किन्तु अपने पिता अथवा चाचा द्वारा की गई बालक की हत्या

की यह पहली घटना है जिस पर जितना भी शोक प्रकट किया जाय उतना ही कम है। इस सम्बन्ध में जालन्धर के दैनिक वीर प्रताप हिन्दी में उसकी कुछ आवश्यक बातें निम्नलिखित हैं–

'इससे पहले बालक की मां को जिसे शायद दो तीन दिन पहले इस बात का पता लग गया था विरोध करने के कारण बुरी तरह मारपीट कर घर से बाहर निकाल दिया गया था और वह गुरुदासपुर जाकर बीमार हो गई थी।'

'यज्ञ के समाप्त होने से तीन दिन पहले परसराम ने प्रकाश को कहा कि इसके अन्दर 'लाट' (ज्योति) प्रकट हो गई है इसलिये हमारी जो मां लगभग 60 वर्षीय बूढ़ी है शनिवार को स्वर्ग सिधार जाएंगी और रविवार को हमें तीनों बालकों को बलि दे देनी होगी। न तो शनिवार को उनकी मां मरी और न ही उन्हें किसी प्रकार की ज्योति दिखायी दी। रविवार की सुबह यज्ञ जागरण खत्म हो जाने के बाद परसराम ने फिर प्रकाश को कहा कि उसे फिर 'लाट' दिखाई दी है, इसलिये बालकों को बलि देने का समय आ गया है। बालकों को ले आओ। बलि देने के लिये छत पर शामियाना सजाया गया था और एक बड़ा सा लक्कड़का मोटा सा लट्ठ जिस पर कसाई लोग मांस काटते हैं, रखा हुआ था और बकरे को काटने वाला दरांत पड़ा हुआ था। सबसे पहले बड़े दस वर्षीय बालक को पकड़ने का यत्न किया गया लेकिन वह भाग निकला। शायद उसे किसी ने बता दिया था। वह स्वयं आने वाले संकट को भांप गया था जो बच निकला, उससे छोटा साढ़े पांच छः वर्षीय बालक को हत्यारों का एक चचेरा भाई लेकर थाने पहुंच गया। सबसे छोटा साढ़े तीन वर्षीय पृथ्वी जो बाजार से कुछ खाता चला आ रहा था, को अभियुक्तों की बहनों माया और कौशल्या ने पकड़ कर पहले नहलवाया और बाद में ऊपर छत पर ले गई। यहां बालक की टांगें पकड़कर उसकी हत्या करने में हत्यारों की मद्द की।

पहले जब प्रकाश ने स्वयं दरांत चलाना चाहा तो वह गर्दन पर जाकर रुक गया। इस पर बालक ने पूछा 'पापा की करन लगाए' बेटे तेरी बलि देनी है। भला साढ़े तीन वर्षीय बालक बलि के भेद को क्या जाने। परसराम ने जब प्रकाश को पूछा कि क्या बात है तुम दरांत नहीं चला रहे तो प्रकाश ने कहा कि मेरी आंखों के सामने अंधेरा छा रहा है। इस पर परसराम ने कहा कि तुम अपनी आंखें बन्द कर लो। जब उसने आंखें बन्द कीं तो परसराम ने फूल से मासूम बालक की गर्दन एक ही झटके में धड़ से अलग कर दी और प्रकाश को आंखें खोलने को कहा–आंखें खोलने के बाद प्रकाश के दिल में पता नहीं क्या आया कि वह स्वयं ही दरांत से बालक की लाश के टुकड़े–टुकड़े करने लगा।

इस बीच उसकी दोनों बहिनें नीचे जाकर मांस को पकाने के लिये मसाला घोटने के लिये चली गई। यह घटना कोई रात को नहीं बल्कि सुबह दस बजे इर्द–गिर्द के मकानों की छतों पर इस कांड को देख रहे ढाई तीन सौ लोगों के सामने हुई और कोई भी हत्यारों को रोकने की हिम्मत न कर सका। इस बीच पुलिस पहुंच गई। पहले तो पुलिस ने लाश के टोटे करते देख सोचा कि शायद किसी बकरे के टुकड़े–टुकड़े किये जा रहे हैं और पुलिस नीचे उतर गई। लेकिन जब लोगों के कहने पर कि बालक को कत्ल किया गया

www.thearyasamaj.org

है, और उसके मांस का कीमा बनाया जा रहा है तो पुलिस फिर छत पर गई। इस बार हत्यारों ने पुलिस को डटकर मुकाबला किया और सिपाही की टांग पर दरांत मार दिया। सौभाग्य से वह सिपाही बच गया। जब पुलिस छत पर उन्हें पीट रही थी तो उनकी बहनें थानेदार से उन्हें न मारने के लिये कहने लगीं। इस पर जब थानेदार ने उन्हें भी पीट डाला तो लोगों ने बताया कि यह नीचे मांस को पकाने के लिये मसाला घोट रही थीं और उन्होंने बालक को कत्ल करने में उसकी टांग पकड़ कर हत्यारों की सहायता की है तो थानेदार ने उन्हें भी गिरफ्तार करने का आदेश दे दिया और गिरफ्तार कर लिया तो कौशल्या कहने लगी कि हमें कच्चे मांस का ही एक-एक टुकड़ा खाने को दे दिया जाय ताकि इसका स्वाद देख सकें। पुलिस जब हत्यारों से बच्चे के मांस के 27 टुकड़ों की एक पेटी में उलट रही थी तो कई नारियां बेहोश हो गई, यहां तक कि कठोर हृदय के मालिक थानेदार की आंखों में भी आंसू तैरने लगे। हत्यारों के चेहरे पर जरा सी शिकन भी नहीं आई थी और उनकी सहायक बहनें थाने में ऐसे बैठी हुई थीं जैसे कि घर बैठी हुई हों।

हत्यारे प्रकाश और परसराम के अनुसार वे तीनों बालकों को बलि देने के बाद इन्हें पुनः जीवित कर सकते हैं। जब थानेदार ने उनसे पूछा कि तुमने ऐसा क्यों किया तो कहने लगे कि यदि हमें तीनों बालकों की बलि देने देते तो हमें राजयोग मिलता और हमारे गुरु पिता की आत्मा को शान्ति मिलती। जब उनसे पूछा गया कि तुमने अपनी बलि क्यों न देकर बालक की क्यों दी तो कहने लगे कि हमारी बलि नहीं मांगी गई थी।

जब उनसे यह कहा गया कि अब बालक को जीवित करें तो परसराम कहने लगा कि पहले मांस को पकाकर खो दिया जाय और बाद में वह उसे जीवित कर देंगे। अन्त तक वे यही कहते रहे कि उन्हें अपना काम पूरा करने दिया जाए। जहां इस घटना के सुनते ही शरीर कांपने लगता है वहां कुछ राजनीतिक व्यक्ति अपनी स्वार्थ सिद्धि के कारण इस केस को दबाने की कोशिश में लगे रहे। पुनः दीनानगर का चक्कर लगाने से पता चला कि कुछ व्यक्तियों ने गुरुदासपुर में जाकर उच्चाधिकारियों से प्रार्थना की कि इस काण्ड में से माया और कौशल्या को निकाल दिया जाये।

इस तरह एक व्यक्ति की सनक ने पूरे परिवार को ही तबाह नहीं किया बल्कि समय के इतिहास में अमानवीय कृत्य और अमानवीय अत्याचारों की क्रूरतम गाथा का पृष्ठ और जोड़ दिया है।'

यद्यपि गुरुदासपुर के District and Session Judge श्री वेदप्रकाश जी शर्मा को पृथ्वी के चाचा परसराम को मृत्यु दण्ड, उसके पिता प्रकाशचन्द, दो फूफियों माया और कौशल्या तथा भजन मण्डली के चार सदस्यों (धनीराम, विशम्भर, अमरनाथ और प्रकाश) को आजन्म कारावास का दण्ड दे चुके हैं, किन्तु विचारणीय बात तो यह है कि जो लोग आये दिन गई प्रकार की मिथ्या बातें सुनाकर मूर्ख एवं धर्मान्ध व्यक्तियों को लूटने और उन्हें किसी मनुष्य अथवा पशु की बलि देने की प्रेरणा करते रहते हैं उन सब को यदि दण्ड न मिला तो ऐसी दुर्घटनाएं सदा होती रहेंगी जैसा कि नर बलि की अनेक घटनाओं में से उदाहरण के रूप में दी गई निम्नलिखित घटनाओं से इस बात की पुष्टि होती है-

www.thearyasamaj.org

1- जिला सुल्तानपुर (यू0 पी0) की एक स्त्री ने काली देवी को प्रसन्न करने के लिये अपने एक पड़ौसी के 6 वर्षीय बालक की हत्या कर दी। (26-7-1973 का 'दैनिक प्रताप उर्दू' नई दिल्ली)

2- केरल के 'भद्रकाली मन्दिर' की देवी के सामने अपने देवदास नामक भतीजे की बलि देने पर 29 वर्षीय एक व्यक्ति को मृत्यु दण्ड दिया गया। (21-11-1973 का दैनिक 'वीर अर्जुन' दिल्ली)

3- नागपुर के रामदास नामक व्यक्ति के बलि दिये जाने पर पांच अपराधियों को आजन्म कारावास का दण्ड मिला। (16-3-1974 का दैनिक 'दी हिन्दुस्तान टाइम्स' अंग्रेजी)

4-जबलपुर के रूपचन्द नामक जुआरी ने जुए में हार से बचने के लिये अपने 18 मास के पुत्र के शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके उसका रक्त शारदा देवी पर चढ़ाया। (9-4-1974 का दैनिक 'वीर अर्जुन' दिल्ली)

5- बस्तर (भोपाल) के हरिदास नामक एक व्यक्ति ने अपने भतीजे और पिण्डों नामक दूसरे व्यक्ति ने अपने पुत्र की बलि दे दी। एक बालक 12 वर्ष का था और दूसरा एक वर्ष का। (25-4-1974 का दैनिक ' वीर अर्जुन' दिल्ली)

6- एक कलयुगी स्वामी ने 'इन्द्र देवता' को प्रसन्न करने के लिये अपने 21 वर्षीय चेले की बलि दे दी, जिस पर स्वामी समेत 5 अपराधियों को पकड़ लिया गया। (17-9-1974 का दैनिक 'प्रताप' दिल्ली)

7- रामपुर के ग्राम जवल के दो आदिवासियों को वर्षा तथा अच्छी फसल की कामना से 'देवता' को प्रसन्न करने के लिये एक अन्य आदिवासी की बलि देने के कारण बन्दी बना लिया गया। (3-4-1975 का दैनिक 'दी हिन्दुस्तान टाइम्स' दिल्ली)

8- कांगड़ा डिस्ट्रिक्ट के ज्वालामुखी के मन्दिर में भेंट करने के लिये गोपालसिंह नामक व्यक्ति ने अपने भाई हाकिमसिंह का सिर काटकर रख दिया। कई अन्य व्यक्तियों ने तथाकथित देवता को प्रसन्न करने के लिये अपनी जिह्वायें काटकर भेंट कर दीं। (7-3-1976 'दी टाइम्स आफ इण्डिया' दिल्ली)

9-जिला अहमदाबाद के श्री अम्बादास पूनमचन्द के दो पुत्रों 5 वर्षीय डिम्पल और 2 वर्षीय संजय की बलि दे दी गई। (7-4-1976 का दैनिक 'दी हिन्दुस्तान टाइम्स' दिल्ली)

10- जिला बस्ती के एक दस वर्षीय बालक की बलि दी गयी जिसके शव के समीप पुष्प, चावल तथा अन्य वस्तुएं पड़ी हुई मिलीं और गले में पुष्प माला डाली हुई थी। (11-4-1976 का 'दैनिक हिन्दुस्तान टाइम्स' दिल्ली)

11- इन्दौर के 25 वर्षीय एक युवक ने अपनी 50 वर्षीय माता की बलि दे दी। (8-4-1977 का दैनिक 'हिन्दुस्तान' दिल्ली)

12- बरेली से 4 मील की दूरी पर एक व्यक्ति ने 'देवी की अन्धभक्ति के कारण अपने परिवार के 6 सदस्यों की बलि दे दी। तब उसके पुत्र ने उसे मौत के घाट उतार दिया। (17-4-1977 का दैनिक

'हिन्दुस्तान' दिल्ली)

13- रक्षा बन्धन के पर्व से एक दिन पूर्व गुजरात के सांबरकांठा डिस्ट्रिक्ट के श्री बुद्धिप्रसाद सुखाड़िया के इकलौते पुत्र को जो 6 बहनों का भाई था 'कालका देवी' की भेंट चढ़ा दिया गया। (9-10-1977 का दैनिक 'प्रताप' दिल्ली)

धर्म क इन ठेकेदारों के प्रचार से प्रभावित होकर ही परसराम ने यह घोषणा की थी कि देवी को बलि देने के बाद बालक फिर जीवित हो जायेगा। ऐसे मूर्ख व्यक्ति यह बात नहीं समझते कि जो जड़मूर्ति अपने शरीर पर बैठी हुई मक्खियों को नहीं हटा सकती वह किसी मृत व्यक्ति को कैसे जिला सकती है जब कि यह बात सृष्टि नियम के सर्वथा विरुद्ध है। दूसरे एक दो देवियां नहीं, अपितु कई देवियां पूजी जाती हैं। कोई काली देवी की पूजा करता है, तो कोई दुर्गा देवी की, कोई वैष्णव देवी की, कोई मनसा देवी की। अब इन तथाकथित देवियों के उपासक ही बतलायें कि यदि एक देवी किसी से अप्रसन्न होकर उसे शाप दे दे और दूसरी उससे प्रसन्न होकर उसे वरदान दे तो फिर किस देवी की बात पूरी होगी? मानना पड़ेगा कि यह सब देवियां जड़ होने के कारण न तो किसी व्यक्ति को किसी प्रकार का दु:ख दे सकती हैं और न ही किसी को सुख। वास्तविकता तो यह है कि कई पापी, पाखण्डी, स्वार्थी और दम्भी लोगों ने इन्हें अपनी उदरपूर्ति का साधन बना रखा है। वे सर्वसाधारण व्यक्तियों की अविद्या एवं अन्धविश्वास का लाभ उठाकर उन्हें कई झूठी गाथाएं सुनाते रहते हैं जिसके परिणाम स्वरूप प्रतिमास राष्ट्र के लाखों रुपये 'भगवती जागरण' के नाम पर नष्ट हो जाते हैं।

इन परिस्थितियों में जहां सरकार का यह कर्तव्य है कि वह इन मिथ्यावादियों को दण्ड दे वहां आर्यसमाज जैसी पवित्र एवं धार्मिक संस्था को भी चाहिये कि वह अपने आन्दोलन द्वारा इस प्रकार के पाखण्ड जाल को सदा के लिए समाप्त कर दे जिससे कि ऐसी दुखद घटनाएं फिर कभी न हों। इस समय भोले-भाले लोगों को यह बात समझाने की आवश्यकता है कि पूजा के पात्र केवल परम पिता प्रभु ही हैं। वही सृष्टिकर्ता एवं कर्मफल दाता हैं। हमें अपने जीवन में सुख अथवा दु:ख मिलता है वह हमारे कर्मों के फलस्वरूप उसी जगदाधार पिता की व्यवस्था का ही परिणाम है। प्रभु सर्वशक्तिमान, सर्व अन्तर्यामी एवं सर्वव्यापक हैं, अत: कोई भी मनुष्य उनकी मूर्ति नहीं बना सकता जैसा कि यजुर्वेद बत्तीसवें अध्याय के तीसरे मन्त्र से स्पष्ट है- **"न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यश:।"**

अर्थात् जिस परमेश्वर की बड़ी भारी महिमा है उस सर्वव्यापक परमात्मा की मूर्ति नहीं हो सकती।

ईश्वर भक्ति का मुख्य उद्देश्य यह है कि जो गुण ईश्वर में हैं वे गुण हम अपने जीवन में धारण करें। यदि देवियों की पूजा करनी है तो मनुष्य के हाथों धातु या पत्थरों से बनी हुई जड़ मूर्तियों की पूजा के बदले जीती जागती, चलती-फिरती और खाती-पीती देवियों की (जिन्हें ईश्वर ने हमारी माताओं, बहनों और पुत्रियों के रूप में उत्पन्न किया) पूजा करें। परम पिता प्रभु हम सबको सुमति प्रदान करें जिससे कि हम कुमार्ग को त्यागकर सन्मार्ग की ओर अग्रसर हों। ❁❁❁

www.thearyasamaj.org

मनुष्य मात्र की सहायता करना

लेखकः बाबू सूरजभान वकील

अधिकाधिक सुख की प्राप्ति और सहज ही अनेक कार्य सिद्ध होने के लिये मनुष्य को ऐसे बहुत से कामों की जरूरत पड़ती है जो एक-एक गाँव के लोगों द्वारा भी सम्पन्न नहीं हो सकते हैं, बल्कि जिनके बनाने में सारे देश भर को अथवा सारे संसार को जुटाना पड़ता है। यथा-सड़कें बनवाना, बड़ी-बड़ी नदियों के घाट चिनवाना, पुल बँधवाना, मार्गों पर जगह-जगह कुंए खुदवाना, पानी की पौ बिठाना, बड़े-बड़े स्कूल, कालेज अथवा विश्वविद्यालय स्थापित कराना, वैद्यक, शिल्पकारी तथा कृषि सम्बन्धी कला कौशल सिखाने के लिए अनेक प्रकार के स्कूल खुलवाना, देश के नामी मानी विद्वानों को सहायता देकर और उनके लिए वृत्तियाँ नियत करके उनसे उत्तमोत्तम ग्रन्थ लिखवाना, उन्हें सब प्रकार का खर्च देकर विदेशों में भेजना जिससे वे अन्य देशों के कला-कौशल सीख आवें और उनका अपने देश में प्रचार करें, उनसे तरह-तरह के आविष्कार कराना, मनुष्यों और पशुओं के लिए बहुत ऊँचे दर्जे के अस्पताल खुलवाना, बड़े-बड़े पुस्तकालय स्थापित करना, विविध वस्तुओं की प्रदर्शिनियाँ खोलनी, अजायबघर बनाना, सभायें चलाना, उपदेशक घुमाना, अनाथालय, औषधालय, कुष्ठालय चलाना, समाचार पत्र निकालना इत्यादि। इनमें से बहुत से कार्य तो सारे देशवासियों के चंदे से हो जाते हैं और बहुत्त से कार्य धनवानों के द्वारा हो जाते हैं। इस प्रकार ये बड़े-बड़े कार्य चलते हैं और इनसे सभी को लाभ पहुँचता है।

जिस प्रकार कि चार आदमियों के कुटुम्ब में रोटी बनानेवाली घर की स्त्री सिर्फ अपने ही वास्ते रोटी नहीं बनाती, बल्कि चारों के वास्ते बनाती है और जिस रोज उसे स्वतः नहीं खानी होती है उस दिन भी वह शेष तीनों आदमियों को बनाती है और उसके बनाने में प्रतिदिन के समान सावधानी रखती है। इसी प्रकार जो व्यक्ति सार्वजनिक हित की वस्तुएँ बनवाते हैं वे केवल वही चीजें नहीं बनवाते हैं कि जिनसे बहुतों को लाभ पहुँचता है। क्योंकि यदि अपनी-अपनी जरूरत के अनुसार ही सब कार्य किये जायँ तो दुनिया के बहुत से भारी-भारी काम रुक जायँ और सार्वजनिक हित के कामों में भारी विघ्न उपस्थित हो जाय। उपरिलिखित चार आदमियों के कुटुम्ब में यदि घर की स्त्री उस दिन रोटी न बनावे जिस दिन उसे न खाना हो, तो बेचारे शेष तीनों आदमियों को भारी दिक्कत उठानी पड़े, फिर उनमें से जो रोजी कमानेवाला है वह भी उस दिन रोजी कमाने नहीं जायगा जिस दिन के कि उसे किसी कारण से भोजन नहीं करना होगा और इस तरह वह शेष तीनों आदमियों को भूखा रक्खेगा। इसी प्रकार बाकी दो आदमी भी उस दिन अपने जिम्मे का काम नहीं करेंगे जिस दिन कि उनको स्वयं उन कामों की जरूरत न होगी। गरज यह कि ऐसा होने से सारा खेल ही बिगड़ जायगा और पारस्परिक सहायता का क्रम भंग हो जायगा। परस्पर की सहायता का यह क्रम तभी चल सकता है जब घर के सब आदमी अपने साथियों के लिए भी उसी तरह काम किया करें जिस तरह कि वे अपने लिए किया करते हैं। ऐसे ही सर्वहित के वे सब कार्य भी किये जाने चाहिएँ जिनकी कि गाँववालों, देशवासियों अथवा मनुष्य मात्र को जरूरत हो। स्वयं अपने को उनकी जरूरत हो या न हो, परन्तु सबके हित के लिए उन कामों का करना मनुष्य मात्र का धर्म होना चाहिए। ऐसा करने से ही सब काम बन सकते हैं और उनसे सबको यथोचित्त लाभ पहुँच सकता है।

www.thearyasamaj.org

प्रत्येक मनुष्य को सोचना चाहिए कि मैं दूसरे के बनाये हुए कुंए का पानी पीता हूँ। यदि अपने गाँव में अपना ही खुदाया कुंआ है तो जब सफर को जाता हूँ तब अवश्य ही दूसरों के कुंए का पानी पीता हूँ। यदि मैं दूसरों से यह सहायतां न पा सकता तो मेरा सारा कार्य डूब जाता। मान लो, यदि प्रत्येक गाँव के लोग दूसरे गाँव के लोगों को न तो अपने कुंए से पानी देते और न अपनी धरती पर से चलने देते तो दुनिया के लोगों का अपने गाँव से बाहर निकलना ही बंद हो जाता और ऐसी चीजें जो प्रत्येक गाँव में पैदा नहीं होती हैं बाहर से न आने से सभी लोगों को बड़े भारी संकट का सामना करना पड़ता। दुनिया के सारे कारबार बंद हो जाते और यहाँ तक कि मनुष्य का जीवन-निर्वाह बिल्कुल असंभव हो जाता। अतएव मनुष्यों का कार्य पारस्परिक सहायता से ही चल सकता है और यह सहायता इस प्रकार दी जा सकती है कि सार्वजनिक हित के कामों में से कोई तो किसी काम को बनवा देवे और कोई किसी को; परन्तु उन कामों से लाभ सभी उठावें और इसके लिए कभी भूलकर भी बदले का खयाल मन में न लावें। इनका बदला हमें इस प्रकार मिल जाता है कि हमारे बनाये हुए कामों से सारी दुनिया लाभ उठावे और दुनिया भर के कामों से हम लाभ उठावें। अर्थात् सारी दुनिया एक कुटुम्ब हो जाय और अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार सभी आदमी समस्त कुटुम्ब के हितकारी कामों को करने लग जावें।

सार्वजनिक हित के कार्य करते समय मनुष्य को यह विचार नहीं करना चाहिए कि इस कार्य का फल मुझे मेरे जीवन में ही मिल जावेगा या नहीं, प्रत्युत उस कार्य का फल चाहे कितने ही दिन में क्यों न मिले, या अपने जीवन भर में भी उसके मिलने की आशा न हो तो भी जनहितकारी कामों को करने में कभी कुंठित नहीं होना चाहिए। क्योंकि संसार में बहुत से कार्य ऐसे होते हैं कि जिनका फल बहुत देर में मिलता है और उन कार्यों को करने वाला मनुष्य, प्रायः उनका फल या नतीजा देखे बिना ही चल बसता है। बहुत से वृक्ष ऐसे हैं कि जिनमें बीसों या पचासों वर्ष के बाद फल लगते हैं, या उनकी छाया ऐसी हो पाती है कि जिसके नीचे मनुष्य विश्राम कर सकें। अतएव ऐसे वृक्ष इसी ख्याल से लगाये जाते हैं कि जो वृक्ष हमारे पूर्वजों ने लगाये थे उनके फल हम खा रहे हैं और जो हम लगावेंगे उनके फल हमारी आगामी सन्तान खायेगी। क्योंकि अपने पूर्वजों की जिस उदारता के कारण हमको इन वृक्षों के फल खाना या इस छाया में बैठना नसीब हुआ है उसी उदारता से हमको भी काम लेना चाहिए और अपनी आगामी सन्तान के लिए ऐसे ही सुखप्रद कामों की जड़ जमा जानी चाहिए। सारांश यह है कि मनुष्य मात्र की सहायता में जितनी अधिक उदारता दिखलाई जायगी, जितनी ही निष्काम सेवा की जायगी, उतना ही मनुष्य जाति का कल्याण होगा और वह सुख सम्पन्न होकर उत्कृष्ट बनती जायगी।

किसी समय इस भारतवर्ष में यह निष्काम सेवा या मनुष्य जाति की हितैषिणा बहुत ऊँचे आसन पर विराजमान थी और सारा संसार एक कुटुम्ब के समान समझा जाता था, जिसके परिणाम से जहाँ दृष्टि डालो तहाँ सुख ही सुख दिखाई देता था, दुःख दर्द का कहीं नाम नहीं था और सर्वत्र निर्भयता, निःशंकता तथा पारस्परिक सहानुभूति और सहायता का भाव लक्षित होता था। परन्तु खेद के साथ लिखना पड़ता है कि अब ये सब बातें केवल किस्सा कहानी ही रह गई हैं। हाँ, दूसरे देशों में अवश्य ऐसी बहुत कुछ बातें सुनने में आती हैं। कहा जाता है कि जिस समय रूस और जापान के मध्य युद्ध चल रहा था उस समय जापान के दो फौजी अफसर रूस में बंदी हुए थे। उनके पास दो हजार रुपयों के नोट थे। जब उनको प्राणदंड की आज्ञा दी गई, तब उनसे पूछा गया कि तुम अपने बाल बच्चों का पता बतलाओ जिससे ये नोट उनके पास भेज दिये जायँ। इस पर उन्होंने उत्तर दिया कि

www.thearyasamaj.org

"हमारे बाल बच्चों की पालना के लिए तो सारा देश (जापान) मौजूद है जो उनको हमसे भी अच्छी तरह पालन करेगा, और अपनी ही औलाद के समान जानेगा; परन्तु हमको अपने उन जापानी भाइयों की फिकर है जो तुम्हारी कैद में फँसे हुए हैं और देश की गोद से अलग हो गये हैं। अतएव अगर आप स्वीकार करें तो हमारे इन रुपयों को उन्हीं की टहल-सेवा में खर्च कर दीजिए।"

पाठकगण इस एक ही दृष्टान्त से भली भांति समझ सकते हैं कि जिस देश में पारस्परिक सहायता का व्यवहार होता है, अनाथों तथा अपाहिजों की उदारता के साथ पालना होती है, वहाँ सब आदमियों को कैसा भरोसा रहता है और कैसी निश्चिन्तता रहती है कि यदि हम किसी समय बिलकुल ही दरिद्री और अपाहिज हो जायँगे तो भी कुछ दुःख न होगा और यदि असमय में मर जायँगे और अपने बाल बच्चों को बिलकुल ही अनाथ छोड़ जायँगे तो उनकी पालना में भी किसी प्रकार की बाधा न आयेगी। क्योंकि उस समय तो उन पर सारे देश की छत्रछाया हो जायगी। परन्तु खेद है कि भारतवर्ष में आजकल जब किसी को इतना इत्मीनान नहीं होता है कि मेरे अपाहिज हो जाने पर मेरा सगा भाई भी मेरी सहायता करेगा और मुझे पड़े-पड़े खिलायेगा, तब यह खयाल ही कैसे किया जा सकता है कि मेरे मरने के पश्चात् कोई मेरी सन्तान का पालन-पोषण करेगा। इसका कारण यही है कि हम स्वयं ऐसे स्वार्थी हो गये हैं कि दूसरों की सहायता करने को अपना कर्तव्य समझने के बदले उसे एक बोझा समझने लग गये हैं, और जहाँ तक हमसे बनता है इस बोझे को दूर फेंक देने, या दूसरों की सहायता से दूर भागने की चेष्टा करते हैं। इस तरह हम मनुष्य का रूप धारण करके भी पशुओं के समान कर्तव्यहीन या स्वार्थी बन गये हैं, इसीलिए दूसरों की सहायता से वंचित रहकर नाना प्रकार के दुःख सहते हैं और किसी प्रकार की उन्नति नहीं कर पाते हैं। परन्तु पाश्चात्य लोगों ने जिनको कि हम जड़वादी कहकर तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं, आजकल इस पारस्परिक सहायता में खूब उन्नति की है और इसीलिए सुख-सम्पत्ति उनके घर की चेरी बन गई है। यही कारण है कि वे स्वर्गसुख भोग रहे हैं और हम जैसों के भाग्य विधाता बनकर देवता के समान पूजे जा रहे हैं।

पाश्चात्य देशों के पादरी लोग हिन्दुस्तान की दुर्दशा दिखलाकर युरोप और अमेरिका से लाखों करोड़ों रुपया माँग-माँग कर लाते हैं और अकाल के समय यहाँ के गरीबों को खिलाकर उनका पालन पोषण करते हैं। यही नहीं, वे उन्हें अनेक प्रकार के काम सिखाकर और पढ़ा लिखाकर योग्य बनाते हैं। भारत के अध्यात्मवादी दूसरे देश के निवासियों पर तो क्या दया दिखलायेंगे, अपने ही देश के अनाथों की पालना इन विदेशी-विधर्मी पादरियों के हाथ से होते देखकर जरा भी नहीं ले जाते हैं। हाँ, उन अनाथों के धर्मभ्रष्ट हो जाने के कारण उनसे घृणा अवश्य करने लगते हैं और ऐसे कठोर हृदय के बन जाते हैं कि यदि उनमें से कोई फिर हिन्दू होना चाहे तो उसे नहीं बनाते हैं और उसकी सन्तान को हमेशा धर्मभ्रष्ट रहने के लिए लाचार करते हैं।

जिस समय भारतवासी सारे संसार को कुटुम्ब तुल्य मानते थे और मनुष्य मात्र की रक्षा, शिक्षा तथा पालना को अपना कर्तव्य समझते थे, उस समय भारत के उपदेशक संसार के समस्त देशों में जाते और समझा बुझाकर सबको सत्य मार्ग पर आरूढ़ कराते थे। परन्तु क्या यह लज्जा की बात नहीं है कि अभारतवासी अपने पूर्वजों के इन सब सद्गुणों के गीत गा गाकर तो फूले अंग नहीं समाते हैं परन्तु अपने लिए ऐसा करना महापाप समझते हैं। यही नहीं, आजकल इस देश के अनेक धर्मात्मा पुरुष अपने में से ही बहुतों को धर्मसाधन और धर्मग्रन्थ पढ़ने के अयोग्य समझते हैं और जिन्हें योग्य भी समझते हैं उनको भी धर्ममार्ग बतलाने में नाकों चबबाते हैं। सच

www.thearyasamaj.org

तो यह है कि जो उदारता किसी समय भारतवासियों में थी वही अब पाश्चात्यों में दिखाई देने लगी है। इसी कारण अब वे सारी दुनिया के प्रभु बन रहे हैं और इतने सभ्य बन गये हैं कि सब लोग उनसे तमीज सीखते हैं। यही नहीं, वे लोग हथेली पर जान रखकर और भारी भारी जोखिमें उठाकर अफ्रिका आदि देशों के हबशियों तक में विद्या तथा धर्म का संदेशा पहुंचाते हैं। ऐसे परोपकारी कामों के लिए यूरोप अमेरिका के उदार पुरुषों से लाखों करोड़ों रुपयों का चन्दा मिलता है जिसमें से कई करोड़ रुपया तो केवल भारतवर्ष में ही खर्च कर डालते हैं। भारतवर्ष के धर्मात्मा इनके प्रति तिरस्कार प्रकट करते हुए और इन्हें म्लेच्छ तथा जड़वादी कहते हुए भी इनके दान को लेने के लिए पल्ला पसारकर खड़े हो जाते हैं और अपने मन में इतना भी विचार नहीं करते हैं कि अगर हम अब इस योग्य नहीं रहे हैं कि दूसरे देशों का उपकार कर सकें तो क्या यहाँ तक भी डूब गये हैं कि अपने बालक-बालिकाओं के लिए काफी स्कूल भी नहीं बनवा सकते हैं? इस कार्य में विदेशियों का मुंह ताकते हैं और उनके स्कूलों तथा कालेजों में अपने बालकों को ईसाई धर्म की पुस्तकें पढ़ने और ईसाई धर्म की प्रार्थना में शामिल होने के लिए बाध्य करते हैं।

संसार भर के मनुष्यों को एक कुटुम्ब मानने और निराश्रितों तथा रोगियों की सहायता करने में पाश्चात्यों ने ऐसी उदारता दिखलाई है कि वे अपने देश से पैसा पैसा मांगकर भारत के उन कोढ़ियोंके लिए आश्रम बनवाते हैं जिनको देखकर कि हम नाम भौं चढ़ाते है, छिः छिः करने लगते हैं और इस बात का जरा भी विचार नहीं करते हैं कि ये हमारे ही देशवासी हैं-हमारे ही आश्रित हैं। यदि हमारे भारतवासी इन पादरियों के बनवाये हुए कोढ़ियों के आश्रम जाकर देखें और यदि वहाँ जाने में घृणा आती हो तो कम से कम वहाँ की रिपोटें पढ़कर ही देखें, तो उन्हें मालूम होगा कि ये विदेशी पादरी उन कोढ़ियों की मरहमपट्टी करते हैं, घंटों उनके समीप सेवा-शुश्रूषा तथा पालन पोषण करते हैं। इसी प्रकार ये पादरी लोग इस भारतवर्ष में उन मनुष्यों की शिक्षा के लिए भी आश्रम खोलते हैं कि जिनके बापदादे सैकड़ों पीढ़ियों से चोरी या डकैती का पेशा करते चले आये हैं। ऐसे कई सहस्र लोगों को इन पादरियों ने अपने आश्रम में भरती किया है और उनको खेती कारीगरी आदि अनेक प्रकार के हुनर सिखलाकर अपने पुरूषार्थ के बल खाने कमाने योग्य बनाकर उनका दुष्ट पेशा छुड़ा दिया है और उन्हें बहुत कुछ सभ्य बना दिया है।

हमारे अध्यात्मवादी भारतवासी तो शायद फिरंगियों के इस कृत्य से नाराज ही हों और बापदादों का पेशा छुड़ाकर दूसरे पेशों में लगाने को जातिभ्रष्ट होना मानकर महापाप ही गिनते हों; परन्तु खेद है कि भारतवासी अपने पूर्वजों की रीत भी तो नहीं करते हैं। वे उनके अच्छे-अच्छे कामों को तो धर्मयुग के काम मानकर और अपने को कलियुगी बतला कर उन कामों से अपना पीछा छुड़ा लेते हैं, तथा खोटे कृत्यों को-जो थोड़े दिनों से चल पड़े हैं-अपने बापदादों की रीति बतलाकर उन्हें गले लगा रहे हैं। भारत के पूर्व पुरुष संसार भर को अपना कुटुम्ब समझते और सबकी भलाई करते थे। इस उत्तम कृत्य को तो हम लोगों ने छोड़ दिया है और आपस की फूट को जो थोड़े दिन से चल पड़ी है। दृढ़ता के साथ पकड़ लिया है। इसी तरह हमारे पूर्व पुरुष माता पिता को देवतुल्य पूजनीय समझते थे और उनकी पूरी-पूरी सेवा-सुश्रुषा करते थे। सो इस बात को तो हम लोगों ने छोड़ दिया, परन्तु कुछ दिनों से जो यह रीति चल पड़ी है कि जीते जी तो माता पिता को पानी तक के लिए तरसाना-कपड़े लत्तों के लिए मुहताज रखना, परन्तु मरने पर परलोक में उनकी सुख प्राप्ति की कामना से दुशाले उढ़ाने, पैसे लुटाने और नगर निवासियों को अचछे अच्छे माल खिलाने की प्रथा को पकड़ लिया है। इन सब बातों से यह सिद्ध होता है कि भारतवासी भले बुरे का ज्ञान छोड़कर जड़बुद्धि हो गये हैं; और स्वार्थ की प्रबलता के कारण उनकी पारस्परिक सहायता का क्रम भी रुक गया है। अर्थात् वे मनुष्यत्व से हीन हो गये हैं और इसीलिए नाना प्रकार के दुःख भोग रहे हैं। ❀❀❀

www.thearyasamaj.org

कुटुम्ब

लेखकः– श्यामसुन्दर दास

बालक का पहला शिक्षण कुटुम्ब ही से प्रारम्भ होता है। कुटुम्ब ही से बढ़कर वह पाठशाला एवं संसार में प्रवेश करता है। कुटुम्ब ही से आगे निकलकर मनुष्य नागरिक होता है और उससे भी आगे बढ़कर देशवासी का पद प्राप्त करता है। अतः सबसे पहले कौटुम्बिक शिक्षण पर ही ध्यान देना उचित है। प्रायः देखा गया है कि देशवासी होकर बड़े-बड़े मनुष्यों ने जो-जो महान् कार्य किए हैं उन सबके मुख्य कारण बीज रूप से बालक को कौटुम्बिक जीवन द्वारा ही प्राप्त हुए थे। मानुषीय प्रकृति एकाएकी नहीं उबल पड़ती, वरन् पौधे की भांति बालपन से धीरे-धीरे बढ़ती है। महाराज रामचन्द्र के दो पुत्र थे और तीनों भाइयों के भी दो-दो पुत्र थे। जिस समय भगवान् निर्वाण प्राप्त के इच्छुक हुए, तो उसके पूर्व उन्होंने अपने और भाइयों के आठों पुत्रों में सब राज्य विभक्त करके सबको समान रूप से सुखी किया। यद्यपि उनकी इस उदारता से राज्य में कई स्वामी होने से बल की क्षति हुई तथापि इससे उनका पूर्ण सुहृद-भाव प्रकट होता है। इसी विचार का बीजरूप रामचन्द्र जी के उन विचारों में मिलता है। जब वनवास के पूर्व उनको राज्य मिलने वाला था। उस समय में उनके भावों का वर्णन गोस्वामी तुलसीदास जी ने निम्न छन्दों द्वारा किया है-

जनमे एक संग सब भाई। भोजन सयन केलि लरिकाई।।
करनबेध उपवीत विवाहा। संग संग सब भयउ उछाहा।।
विमल बंस यह अनुचित एकू। बंधु बिहाय बड़ेहि अभिसेकू।।

महात्मा कुमारिल भट्ट एवं शंकराचार्य ने भारतवर्ष से बौद्ध-धर्म का मूलोच्छेदन कर डाला। इन लोगों का हृदय बाल वयस में वेदों की निन्दा सुनकर संतप्त हुआ करता था। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने संसार में अखंड ब्रह्मचर्य का अद्भुत उदाहरण दिखलाया। इन्होंने भी बालवय में अपने पिता द्वारा अपना विवाह होता देखकर घर छोड़कर भाग जाना ही उचित समझा था। जिस महात्मा गौतम बुद्ध ने संसार को आत्म-विसर्जन, दया और निर्माण के अद्वितीय सिद्धान्त सिखलाए, उसने भी बाल वय में ही बीमारों, वृद्धों, मृतकों आदि को देखकर भारी विषाद किया था। आलिवर क्रांबेल नेपोलियन बोनापार्ट, मिल्टन आदि के उदाहरणों से भी यही बात सिद्ध होती है। कहते ही हैं कि "होनहार बिरवान के होत चीकने पात।" सो यह पूर्णतया सिद्ध है कि जैसा बालक होता है प्रायः वैसा ही मनुष्य होता है। कहा भी है कि बालक मनुष्य का पिता है। अतः बालक-शिक्षण, आत्म-शिक्षण का पहला तथा परम प्रकृष्ट सोपान है।

बालक में यह बहुत बड़ा गुण होता है कि वह प्रत्येक शिक्षण को बड़े उत्साह के साथ अंगीकार

www.thearyasamaj.org

करता है, क्योंकि उसके पास पहले से किसी शिक्षण के विरोधी सिद्धान्त नहीं होते। बालक सम्भवतः अनुकरणशील होता है। अतः वह जिसके पास विशेष रहता है उसी के गुण, कर्म, स्वाभावादि का अधिकता से अनुकरण करता है। बालक सबसे अधिक माता के पास रहता है, सो माता ही उसके लिये पहला आदर्श है। जो माताएँ विदुषी एवं गुणवती होती हैं, वे अपने बालकों को उच्च आदर्श दिखलाकर उनके जीवन के लक्ष्य महान् कर देती हैं। यदि और कारणों से नहीं तो एक इसी कारण से स्त्री-शिक्षा परमावश्यक है। माताओं के सद्गुण सीखने का सबसे बड़ा उदाहरण अष्टावक्र का है। कहते हैं कि माता के विदुषी गर्भ से ही वेदाध्ययन करने लगा था। इस कथन का अक्षरार्थ न लेकर यह तात्पर्य समझना चाहिए कि बहुत ही छोटी अवस्था में यह महात्मा वेदाध्यायी हुआ था। महात्मा शंकराचार्य की माता इतनी दृढ़चित्त स्त्री-रत्न थीं कि यद्यपि विवश होकर उन्हें अपने एकमात्र पुत्र को संन्यास ग्रहण करने की आज्ञा देनी पड़ी थी, तथापि इन्होंने शंकरवियोग का दुःख सदैव इसी विचार से मोचन किया कि मेरा पुत्र मेरी ही आज्ञा से संन्यासी हुआ है फिर इसमें पश्चात्ताप कैसा? यही वज्रवत् दृढ़ता स्वामी शंकराचार्य की सारी प्रकृति में लक्षित होती है। महारानी यशोदा का पुनीत जीवन प्रेमपूर्ण था। उन्होंने संसार को पवित्र प्रेम का अभूतपूर्व उदाहरण दिखलाया है। यही प्रेम उनके पुत्र भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र की नस-नस में व्याप गया था, जो उनके अनेकानेक सत्कर्मों से प्रकट होता है। महारानी कौशल्या का चित्त ऐसा ईर्ष्या-शून्य था कि यद्यपि महाराजा दशरथ अपनी छोटी रानी कैकई की अधिक प्रतिष्ठा करते थे, तथापि उन्होंने राजा से कभी किसी प्रकार का वैमनस्य प्रकट नहीं किया और सदैव उच्च मर्यादा को स्थिर रक्खा। इन्हीं के पुत्र महाराज रामचन्द्र मर्यादा पुरुषोत्तम हुए कि जिन्होंने यावज्जीवन कभी कोई मर्यादा भंग न की।

ईश्वर ने बाल वय जैसे अनेकानेक कर्मों के लिये अशक्त बनाई है, वैसे ही मानो इस शक्तिहीनता का बदला देकर इसे शिक्षा ग्रहण के बहुत ही योग्य बनाया और धारणा-शक्ति इसे बहुत ही प्रखर प्रदान की है। कहते हैं कि मनुष्य चाहे जितने दिन जीए, किन्तु उसके जीवन के पहले बीस वर्षों का समय शेष जीवन से बड़ा होता है, अर्थात् वह पहले बीस वर्षों में जितना सीखता है उतना अपने शेष जीवन में नहीं सीख पाता। कहा गया है कि मनुष्य में छः और सोलह वर्षों की अवस्थाओं में जितना अन्तर होता है उतना सोलह और साठ में नहीं होता। सयाने लोगों को यदि कुछ बतलाइए तो पहले वे उस पर ध्यान ही न देंगे और यदि ध्यान भी दिया तो उस पर विश्वास लाकर उसका अनुकरण प्रायः कभी न करेंगे। इसमें बहुत से सयाने लोग अपनी मानहानि समझते हैं। यदि वे कुछ शिक्षा ग्रहण भी करते हैं तो केवल दो चार चुने-चुने लोगों से। ऐसी दशा में भी वे प्रायः ऐसे ही विचार मान्य समझते हैं। जो स्वयं उन्हीं के विचारों से मिलते हुए हों अथवा प्रतिकूल न हों। बहुधा देखा गया है कि जब कहीं ऐसे लोग किसी सम्मति के प्रतिकूल कोई तर्क-सिद्ध प्रमाण नहीं दे सकते, तब भी प्रायः कह बैठते हैं कि हम बहस में तुमसे जीत नहीं सकते किन्तु कथन हमारा ही ठीक है। हमने एक बार मसूरी में अपने एक कृतविद्य मित्र से किसी सिद्धान्त पर अनेकानेक तर्क देकर अपने विचार प्रकाश किए, किन्तु उन्होंने कोई प्रतिकूल युक्ति न रखते हुए भी उसका

www.thearyasamaj.org

ग्रहण करना उचित न समझा। उन्हीं से दो एक दिनों में प्रसंगवशतः एक ऐसे व्यक्ति ने वही हमारा विचार प्रकट किया कि जिस व्यक्ति पर उनकी विशेष श्रद्धा थी। इस पर उन्होंने बिना विचारे उसे झट मान लिया।

कौटुम्बिक जीवन की सुख शांति का मुख्य रहस्य प्रेम एवं क्रोधाभाव है। क्रोध के प्रकाश से सदन में शांति का लोप हो जाता है, कुटुम्बियों को अनुचित कष्ट होता है, क्रोध करनेवाले की निर्बलता प्रकट होती है, बालकों को नीच उदाहरण मिलता है और हर प्रकार से हानि ही हानि होती है। प्रेम मनुष्य जीवन का रत्न है। इससे मिट्‌टी सोना हो जाती है। संसार में सभी प्रकार की सुखवृद्धि प्रेम से होती है। यह प्रेमपात्र को तो सुख पहुँचाता ही है, किन्तु प्रेमी को उससे भी अधिक सुखद है, क्योंकि उसकी प्रकृति को परमोच्च बनाकर सदैव के लिये उसका कल्याणकारी होता है। कुटुम्ब प्रेम के लिये सबसे बड़ा स्थान है। कोई निर्दयी मनुष्य भी बालक को देखकर प्रेम-मग्न हो सकता है और साधारणतया होता भी है। जो मनुष्य किसी बालक से भी प्रेम नहीं सकता, उसे वास्तव में नर-पिशाच कहना चाहिए। घर, प्रेम और आह्निक कर्त्तव्य पालन एक एक बड़ा पुनीत स्थान है। पिता पुत्र, पति पत्नी, भाई भाई में जैसा सहज प्रेम होता है वैसा इस स्वार्थी संसार में अन्यत्र देख पड़ना कठिन है। जो पुण्यवान् पुरुष इस सहज स्नेहमूर्ति को मित्रता के सुन्दर वस्त्र पहनाकर और भी शोभायमान कर सके उसका जीवन धन्य है। जो पापी अपने निकट के सम्बन्धियों से भी कर्त्तव्यपालन में असमर्थ रहेगा, वह संसार के साथ क्या कर्त्तव्य पालन करेगा? इसी से कहा जा सकता है कि गार्हस्थ जीवन नागरिक एवं देशीय जीवन की तालिका है। इतना अवश्य है कि मनुष्य नगर और देशवासियों को धोखा दे सकता है किन्तु कुटुम्बियों को नहीं, क्योंकि कुटुम्ब में 24 घंटे रहना पड़ता है, सो यहाँ छद्मवेष नहीं चलता और वास्तविक रूप निकल ही आता है। यदि किसी का गार्हस्थ जीवन दूषित हो और फिर भी वह देश में प्रशंसा पा रहा हो, तो समझ लेना चाहिए कि उस बेईमान ने अपने देशभाइयों को भारी धोखा दे रक्खा है। वास्तविक महत्व गार्हस्थ जीवन से ही प्रकट होता है। यह जीवन वास्तविक प्रकृति के लिये कसौटी है।

माता एवं पिता से बालक का जो पुनीत सम्बन्ध होता है वह बहुत ही दैवी शक्तियुक्त है। संसार में मनुष्य अपने से बढ़कर किसी का होना नहीं चाहता, किन्तु साधारण से भी साधारण पिता अपने से अपने पुत्र के बढ़कर होने का परमोत्सुक रहता है। यही एक अलौकिक भाव है जो इस पुनीत सम्बन्ध को बहुत ही उच्च बनाता है। फिर भी देखा गया है कि बहुत से पिता आलस्य एवं अन्य क्षुद्र कारणों से अपने प्राणोंपम पुत्रों के भरण, पोषण, शिक्षण आदि में उदासीनता अथवा शैथिल्य दिखलाते हैं। यह बात हर प्रकार से तिरस्कारणीय है। बहुत से पिता एवं पति अपने पुत्र तथा पत्नी के क्षुद्र अथवा वृहत् दूषण देखकर उनसे ऐसे बिगड़ते हैं कि जन्म पर्यंत उनका मुखावलोकन तक नहीं चाहते। यह सदैव याद रखना चाहिए कि सहनशीलता और क्षमा कौटुम्बिक जीवन के वैसे ही प्राण हैं जैसा कि प्रेम। बिना इनके प्रेम होते हुए भी कुटुम्ब नर्कवत् हो सकता है। कुटुम्ब में क्रोध होना ही न चाहिए, किन्तु यदि कभी उसके किसी व्यक्ति को किसी अन्य पर क्रोध आ जावे, तो दूसरे लोगों को उस समय शांति का आश्रय अवश्य ही लेना चाहिए।

www.thearyasamaj.org

बिना इसके कुटुम्ब नष्ट भ्रष्ट हो जायगा। युधिष्ठिर के भाइयों में ऐसे उदाहरण अनेक घटनाओं में मिलते हैं। यह क्षमा परमावश्यक है।

कुटुम्ब की आधार-स्वरूपा पत्नी है। बिना गृहिणी के गृह नहीं है। चाहे दस मनुष्य भी किसी घर में रहते हों, किन्तु स्त्री न हो, तो वह गृह सराय सा देख पड़ेगा। गृह को वास्तविक गृह बनाने की सामर्थ्य केवल गृहिणी में है। इसलिये गृह में सबसे अधिक पूजार्ह गृहिणी है। सत्य ही कहा जाता है कि जिस घर में स्त्रियाँ सुखी नहीं हैं, उसमें लक्ष्मी का निवास नहीं हो सकता। बहुतों का विचार है कि भारत में स्त्रियों का तादृश सम्मान नहीं है, किन्तु यह विचार कुछ-कुछ सत्य होने पर भी बहुत अंशों में अनुचित है। यूरोप में स्त्रियों का बहुत बड़ा सम्मान किया जाता है, किन्तु वहाँ अभी बात चीत तक में पुरुष का नाम पहले लिया जाता है, स्त्री का पीछे; यथा मिस्टर और मिसेज अमुक। इधर हमारे यहाँ स्त्री ही का नाम पहले लिया जाता है। यहाँ स्त्री पुरुष ऐसा कहा जाता है न कि पुरुष स्त्री। सीताराम, राधाकृष्ण आदि नाम भी इसी कथन को पुष्ट करते हैं। हमारे यहाँ वहाँ की भाँति हस्बैंड और वाइफ नहीं कहा जाता। सम्मानार्थ विद्या, द्रव्य, बल आदि के विचारों को हम लोगों ने सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा से सम्बन्ध रखकर स्त्री-पन दे रक्खा है। हमारे यहाँ इसी प्रकार व्यक्तीकरण द्वारा प्रायः सभी उच्च भावों को सम्मानार्थ स्त्री-पन दिया गया है। फिर भी स्त्री-शिक्षा के अभाव का एक ऐसा प्रचंड दूषण भारत में आ पड़ा है कि जिसने स्त्रियों के बल को बहुत क्षीण कर रक्खा है। विद्वान् पुरुष के सामने किसी अपढ़ मूर्ख के विचार कभी आदरणीय नहीं हो सकते। विद्वत्ता के सम्मुख मूर्खता का सदैव पराभव होगा, यह एक साधारण बात है। एक इसी कारण से स्त्रियों की कुछ-कुछ अवहेलना यदा-कदा विद्वान् हिन्दू कुटुम्बों में हो जाती है, जो बात वर्त्तमान दशा में परम स्वाभाविक है। इसका निराकरण परम सुगमता से स्त्री-शिक्षा द्वारा हो सकता है। अब भी जाति बिरादरी तक में स्त्रियों का इतना मान है कि यदि किसी निमंत्रण में स्त्रियाँ जायँ, और किसी कारण से पुरुष न जा सकें, तो भी निमंत्रण करने वाला सन्तुष्ट रहता है, किन्तु यदि पुरुषों के जाने पर भी स्त्रियां न जा सकें तो निमंत्रण अधूरा ही स्वीकार समझा जायगा। अतः प्रगट है कि भाई बिरादरी, कुल कुटुम्बादि में स्त्री का पद पुरुष से बहुत ऊँचा है।

स्त्री संसार-यात्रा में सबसे अच्छी सखा होती है। दुःख-सुख का बाँटने वाला संसार में स्त्री के बराबर और कोई व्यक्ति नहीं है। पिता पुत्र, भाई बहन सब छूट जाते हैं, किन्तु स्त्री कभी नहीं छूटती। ऐसे चिरसंगी के चुनने में मनुष्यों को अनुचित शीघ्रता अथवा छिछोरेपन कभी न करना चाहिए। केवल सुन्दरता पर स्त्रियों का चुनाव निर्भर रखना सर्वतोभावेन असंगत है। इस विषय में सुगुणों पर पूरा ध्यान देना चाहिए। थोड़े दिन के सहवास से सुन्दर से सुन्दर मुख साधारण समझ पड़ने लगता है, और विशेष आनन्द नहीं देता, किन्तु सुगुणों से नित नया आनन्द प्राप्त होता है।

-(शेष अगले अंक में)

सत्साहित्य का प्रचार-प्रसार राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा है।

www.thearyasamaj.org

भोजन और वस्त्रादि

लेखकः डॉ॰ गोकुलचन्द नारंग

खुली हवा और गर्मी–सर्दी के बचाव आवश्यकता के बाद भोजन का प्रश्न आता है। शिशु के लिये माता के दूध के बराबर अन्य कोई पदार्थ लाभदायक नहीं है। जो माता, किसी खास कारण को छोड़ अपनी सन्तान को दूध नहीं पिलाती, वह एक प्रकार से बच्चे के साथ बुराई करती है। समस्त विज्ञापनी भोजनों से माता का दूध उत्तम होता है। फ्रांस में अक्सर माताएँ अपने बच्चों को एक खास स्थान पर (जो इसी हेतु होते हैं) पलने के लिये भेज देती हैं। इससे मां तो अवश्य आनन्द मनाया करती हैं, किन्तु बच्चे बहुत कम जीवित रहते हैं। यदि माता का दूध दूषित हो तो किसी आरोग्य धाय को रख लेना चाहिये। यदि धाय भी न मिले, और बच्चे को ऊपरी दूध से ही पालना पड़े, तो इस बात का ध्यान रखना चाहिये, कि सफाई खूब हो, और समय पर ठीक गर्मी का भोजन दिया जाय। कुछ दिनों के बाद बच्चे को दो घंटे बाद, और कई महीनों का हो जाने पर तीन–2 घंटे बाद दूध पिलाना चाहिये। यदि दूध पिलाने वाली हमेशा थकी मांदी रहेगी, तो उसका दूध बच्चे को लाभदायक सिद्ध न होगा। दूध पिलाने से मां कभी कमजोर न होगी। परन्तु बच्चे के रोते ही दूध पिलाने पर उतारू न हो जाना चाहिये। इससे दोनों की हानि होती है और सर्वदा बच्चा दूध ही को रोता रहता है, ऐसा न समझना चाहिये। बच्चे को गर्म पानी से अंगोछे द्वारा खूब मलना चाहिये नजला, जुकाम, दर्द आदि के रोग, भीतरी गर्मी के कम होने के कारण उत्पन्न हो जाते हैं। यदि शरीर भली–भांति मला जाय, तो रोग का डर नहीं रहता।

बच्चे को वस्त्र सर्वदा साफ और सूखा पहिनाना चाहिये। इससे उसकी सेहत ही अच्छी न रहेगी, किन्तु बच्चे को सफाई पसंदगी की आदत पड़ेगी। चुस्त कपड़ा कदापि न पहिनाना चाहिये चुस्त कपड़ा और गहना बच्चों की शारीरिक उन्नति में वाधा डालते हैं। यदि सर्दी न हो और कमरे में सील न हो, तो बच्चे का सर खुला रहना चाहिये। थोड़ी सर्दी में खुली टोपी पहिनाना चाहिये। हर समय टोपे बांधे रखने से कानों की बनावट खराब और सुनने की शक्ति कम हो जाती है। जिस कमरे में बच्चा सोता या लेटा हो, वहां पर शोर न होना चाहिये। सोते हुए बच्चे के कान में बात करना (प्यार के कारण) अथवा चिल्लाकर बात करना हानिकारक है। इन कारणों से श्रवण शक्ति कमजोर होती है। अनुभव द्वारा मालूम हुआ है, कि बहलाने के लिये सांकल या घोर शब्द का बाजा न बजाना चाहिये। अक्सर बच्चा चमक को पकड़ना चाहता है, इस कारण दीपक को दूर और सन्मुख रखना चाहिये, जिससे उसको देखने के लिये बच्चे को सर न हिलाना या टेढ़ा करना पड़े। अत्यंत चमक न होनी चाहिये, यदि हो, तो उसके सामने एक हलका पर्दा डाल देना चाहिये। जिससे आंखों की ज्योति मंद न पड़ जाय। अपनी आंखों की शक्ति से अधिक शक्ति वाली चमक हानिकारक हुआ करती है। मैली वस्तुओं, अधिक गर्मी, और अधिक सर्दी, के कारण भी बच्चे

www.thearyasamaj.org

की आंखें निर्बल हो जाती हैं। बच्चे की आंखों में अच्छा काजल प्रतिदिन लगाना चाहिये।

बच्चे का बिस्तर अर्थात् पंगोड़ा पृथ्वी तल से कुछ ऊंचा होना चाहिये। अक्सर देखा गया है कि बच्चे का पंगोड़ा हिलाया जाता है, यही बड़ी हानिकारक बात है। इससे मस्तक अत्यन्त दुर्बल हो जाता है, और यदि जरा भी चोट लग जाय, तो वह निकम्मा हो जाता है। फिर वह एक चलती फिरती लाश के सिवाय और कुछ नहीं रहता है। बच्चों के मस्तक अत्यन्त निर्बल हुआ करते हैं। खोपड़ी बड़ी मुलायम होती है। जरासी हरकत का असर पड़ा करता है। जब बच्चे को हिलाया जाता है, तो वह सो जाता है और इसी कारण हिलाया भी जाता है, पर स्मरण रहे, कि वह नींद स्वाभाविक नींद नहीं होती है, बल्कि जब मस्तक थक जाता है, तब वह एक प्रकार की मूर्छा-सी आ जाती है, जो अत्यन्त हानिकारक होती है। स्वाभाविक नींद स्वयं आया करती है।

बच्चे को रोता देख, दूध पिलाना, अथवा हिंडोले में डाल हिलाना अच्छी चेष्टायें नहीं हैं। यदि बच्चा रोता हो, और उसके मुख पर किसी प्रकार के कष्ट का चिन्ह न हो, तो उसको रोने दो इससे कुछ हानि नहीं, प्रत्युत फेफड़ा साफ और मजबूत होता है। यदि बच्चा रोता ही जाता है, और उसके मुख पर कष्ट चिन्ह हैं तो जान लो कि उसे कुछ रोग है। बच्चे सदैव भूख के कारण सर्दी-गर्मी अथवा दर्द के कारण रोते हैं। भय और अकेले रहने से भी बच्चा रोने लगता है, परन्तु बच्चा क्यों रोता है? यह उसकी मुख आकृति और हाथ की चेष्टा से तुरन्त मालूम हो जाता है।

बाहर, खुली हुई हवा में बच्चे को खिलाने से लाभ होता है। जब तक बच्चे में, इतनी शक्ति न आ जाय, कि वह अपने बल से अपनी गर्दन सीधी रख सके उसे लेटी हुई दशा में रखना चाहिये। जब वह अपनी गर्दन सीधी रखने योग्य हो जाय, तो उसे उठा। उसे चाहिये कि बच्चे की पीठ को अपनी भुजाओं और छाती से लगाए रक्खे। वरन् बच्चे की पीठ कुबड़ी हो जायगी। बच्चे की शक्ति इस बात से जानी जा सकती है, कि जब वह स्वयं उठ बैठ सके। किन्तु यदि बेसहारे छोड़ देने से वह लेट जाय, तो उसे निर्बल ही समझना चाहिये। बच्चे के अवयव लचकदार और निर्बल होते हैं। उसे सर्वदा सावधानी और धीरे से उठाना या लिटाना चाहिये। बच्चे के सम्बन्ध वाली जितनी बातें लिखी जा चुकी हैं, और जो आगे लिखी जायेंगी, वह देखने में छोटी-2 बातें हैं। परन्तु बच्चे के आगामी जीवन में वह अत्यन्त प्रभाव जनक हुआ करती हैं। जैसे अधिक शोर में पलने से बच्चा आगे, चिड़चिड़ा स्वभाव का मनुष्य होगा। शान्ति और आराम के पलने में गम्भीर और सुखमय (हँसमुख) मनुष्य होगा। बचपन में यह छोटी बातें ही लाभदायक होती हैं। इस कारण इस विषय को ध्यानपूर्वक पढ़, तदनुसार कर्तव्य पालन करना चाहिए। जो माता-पिता बच्चे को प्रारम्भ के दो साल तक बुद्धिमानी के साथ पालेंगे, उनको बाद में मालूम होगा कि उनके पुत्र के लिये विद्या का, चरित्रगठन का और कर्तव्य पालन निष्ठा का प्रश्न कितना सहल होता है। वरन् वही लड़के मूर्ख, व्यभिचारी और दुराचारी हो जायेंगे, जिनका बालपन परवाह और अच्छी देख-रेख से व्यतीत नहीं हुआ है। ❋❋❋

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

ऋषि दयानन्द सरस्वती

का जीवन चरित्र

रचयिताः परम ऋषिभक्त पुरुषोत्तमदास, मथुरा

रही न जड़ में आस्था हुआ विगत सन्देह।
मातः भोजन दीजिये कहा पहुँच कर गेह।।

माता की करुणा जाग उठी, बोली तूने ही नहिं माना।
अब खाओ, खाकर सो जाओ, नहिं भेद पिता को बतलाना।।
मन्दिर से घर आते ही सब व्रत पिताजी ने जाना।
'नहिं किया पुत्र तुमने अच्छा, मैंने मन में अति दुःख माना।।
'हे पितृ देव ! मेरी निष्ठा जड़ पूजा में अब नहीं रही।
यह शिव व्रत मुझसे साध्य नहीं, है नम्र निवेदन पुनः यही।।
स्पष्ट मूल का कथन सुना तो पितृ हृदय अति तिक्त हुआ।
चाचा, माता ने तोष दिया, बालक व्रत बन्धन मुक्त हुआ।।

धन्य रात्रि वह हो गई, धन्य भूमि गुजरात।
'शंकर' का यह जागरण लाया पुण्य प्रभात।।

टंकारा ग्राम समीप एक विद्वान् ब्राह्मण रहते थे।
मीमांसा शास्त्र धुरीण परम और कर्म काण्ड रत रहते थे।।
व्याकरण, निघण्टु, निरुक्त आदि के पण्डित माने जाते थे।
अब दयानन्द इनके चरणों में जाकर शिक्षा पाते थे।।
थे मेघा–धनी सदा से ही, विद्या में मन को जोड़ दिया।
विद्या आराधन लीन हुए विषयों से मुख को मोड़ लिया।।
दो छोटी इनसे बहनें थीं, दो छोटे इनसे भाई थे।
यों दयानन्द जी मिलकर के यहा पाँच बहिन और भाई थे।।

स्वर्गिक सुख अनुभव करें सभी बहिन ओर भाइ।
आयुष् सोलह वर्ष की हुई मूल की आइ।।

www.thearyasamaj.org

उत्सव था एक मित्र के गृह लघु बन्धु सहित ये आये थे।
नौकर भागा आया घर से यों समाचार बतलाये थे॥
हो गई बहिन की विशूचिका सुन सभी तुरत दौड़े आये।
कर रहे चिकित्सा चतुर वैद्य पर मुखड़े सबके मुरझाये॥
कृतकार्य न औषधि हो कोई रुग्णा प्रतिपल में मुरझाती।
भवितव्य कहाँ किसके वश में वह घड़ी नहीं टाली जाती॥
देखते-देखते गृह जन के यह प्रेमलता मुरझाय गई।
कूटस्थ काल की गोदी में प्रिय भगिनी हाय विलाय गई॥

कौन माप सकता अहा, मातृ हृदय सन्ताप।
पिता आदि परिजन सभी, करते करुण विलाप॥

उस समय एक ही था ऐसा जो नेत्रों से नहीं रोता था।
भगिनी के शव के पास खड़ा चिन्ता में खाता गोता था॥
सरिता प्रवाह ज्यों बदल जाय पर्वत विशाल से खा टक्कर।
वायु के तीव्र वेग से ज्यों नौका खा जाती है चक्कर॥
अदृष्ट पूर्व यह घटना लख इनकी भी दशा विचित्र हुई।
चित्र से खड़े ये रहे वहाँ मर्माहत बुद्धि अतीव हुई॥
विकराल काल के गालों में क्या एक दिन सबको जाना है?
क्या अस्थिर हैं यह ठाठ सभी जग छूछी-छाछ बिलौना है?

लगे सोचने मूल जी, मन में व्यथा अपार।
पड़े मुझे भी त्यागना, क्या असार संसार?

तब क्यों न स्वयं ही इसे त्याग, मुक्ति का मार्ग अपनाऊँ मैं।
उपलब्धि अमर जीवन की हो, शाश्वत वैभव पा जाऊँ मैं?
दो अरणि परस्पर घर्षण से ज्यों अग्नि प्रकट हो जाती है।
बस इसी तरह इनके उर में वैराग्य-विभा उमगाती है॥
यह कैसा है पाषाण हृदय ! नेत्रों में नीर नहीं आया।
हो गई बहिन की मृत्यु लेश भी नहीं शोक की है छाया॥
जो माँ बरसाती नेह-धार उसने भी कटु व्यवहार किया।
था पितृ-रोष का पार नहीं केवल चाचा ने प्यार किया॥

नैनों में निद्रा नहीं, भगी भूख और प्यास।
छाया है वैराग्य उर, रहने लगे उदास॥

www.thearyasamaj.org

घर वाले बहुविधि समझाते नहिं बात किसी को मन भातीं।
नव तरुणाई की क्रीड़ायें उस पर न रंग कुछ भी लातीं॥
निश्चित धारणा बना लोनी संसार सुख नहिं भोगूँगा।
कितने भी आवें दु:ख मेरु नहिं मृत्यु-विजय-पथ छोड़ूँगा॥
यह जग क्या है जग-कर्त्ता क्या? इसका रहस्य मैं जानूँगा।
इस जीवन जीने का स्वरूप क्या है? यह पहिचानूँगा॥
नहीं प्रकट किसी पर कभी किया जो ठान हृदय में ठानी है।
पढ़ने लिखने में लगे रहे नहिं बात किसी ने जानी है॥

आयु वर्ष उन्नीस की, हुई इसी विधि भ्रात !
इसी बीच उन पर हुआ, भीषण वज्र निपात॥

प्यारे चाचा थे रुग्ण हुए बढ़ गई एक दम बीमारी।
लक्षण विशूचिका के लखकर घबराये गृह के नर-नारी॥
उपचार हो रहे थे भारी पर द्रवा न कोई काम करे।
पिंजरे से तोता उड़न चहै विधि की गति टारे नाहिं टरै॥
संकेत भतीजे को करके चाचा ने पास बुलाया है।
'दो अन्तिम विदा पुत्र!' कहकर नयनों से नीर बहाया है॥
थे चचा इन्हें प्राणाधिक प्रिय सुनकर उनकी कातर वाणी।
हृदय से शोक-उदधि उमड़ा बह चला आंख का बन पानी॥

अविरल आँसू धार में बहा सभी व्यामोह।
बना अग्नि-वैराग्य घृत यह पितृव्य बिछोह॥

निश्चय, दृढ़ निश्चय बना जागा आत्म-विराट्।
गृह त्यागन के हेतु वे लगे जोहने वाट॥

सहपाठी उनके थे एक-दो उन पर भी प्रकट विचार किया।
उनके द्वारा ही मात-पिता ने इस विचार को जान लिया॥
सुत का विवाह संस्कार करें अतिशीघ्र हृदय में ठान लिया।
फंस गृहस्थ बन्धन त्यागेगा वैराग्य-वृत्ति यह मान लिया॥
बस खोज योग्य कन्या के लिये अब तत्परता से होने लगी।
हस्ती को रज्जु-निबद्ध करें योजना सर्व विधि सजने लगी॥
जल्दी विवाह अब हो मेरा यह वृत्त मूल ने जान लिया।
तब पितृचरण में नत शिर हो श्रद्धा युत भाव प्रकाश किया॥

www.thearyasamaj.org

मैं विनय करूं कर जोड़ पिता टुक मेरी तरफ ध्यान दीजे।
ज्योतिष व्याकरण-ग्रन्थ पढ़ने मुझको काशी भिजवा दीजे॥

समझ रहे माता-पिता, पुत्र हृदय का सार।
बोले काशी गमन का, छोड़ो पुत्र विचार।।

कुछ घर के काम काज सीखो अब तुमको नहीं पढ़ाना है।
होना गृहस्थ तुमको जल्दी नहीं कहीं तुम्हें अब जाना है॥
माता ने तो स्पष्ट कहा मैं तेरे मन की सब जानूँ।
करना जल्दी विवाह बेटा! मैं नहीं किसी की भी मानूँ॥
आग्रह करने में लाभ नहीं ये समझ वहाँ से चले गये।
एक दिन अवसर अनुकूल जान यों पूज्य पिता से वचन कहे॥
एक नम्र निवेदन चरणों में कुछ ध्यान पिताजी आप करें।
कुछ दूरी पर विद्वान् एक पढ़ने की आज्ञा दान करें॥

उनसे पढ लूं और कुछ, आज्ञा यदि हो जाय।
नम्र भाव की प्रार्थना, पिता समझ गई आय।।

वहाँ जाकर विद्या पढ़न लगे एक दिन प्रसंग ऐसा आया।
मुझको विवाह से बड़ी घृणा यह भेद इन्होंने बतलाया॥
यह बात पिताजी तक पहुंची अविलम्ब इन्हें बुलवा लीना।
लखकर विवाह की तैयारी मन माँहि मूल निश्चय कीना॥
विद्या का द्वार बन्द करके मुझको बन्धन में डाल रहे।
फँस जाय जाल में यह पंछी यों रुचिकर दाना डाल रहे॥
पर मैं कदापि भव भंवर मध्य जीवन नौका न फंसाऊंगा।
सुर दुर्लभ मानव जीवन को क्यों विषयाक्रान्त बनाऊंगा॥

-(शेष अगले अंक में)

पाठकों से विनम्र निवेदन

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका के उन पाठकों से निवेदन है जिन्होंने वर्ष 2016 का शुल्क अभी तक जमा नहीं कराया है वे वर्ष 2017 के वार्षिक शुल्क के साथ शीघ्र ही **'सत्य प्रकाशन'** कार्यालय को जमा करायें ताकि पत्रिका व विशेषांक सुचारू रूप से आपको प्राप्त होते रहें। इस वर्ष का विशेषांक **''भारत और मूर्तिपूजा''** छपकर तैयार हो रहा है बहुत जल्दी ही आपके हाथों में होगा। **आप यथाशीघ्र बकाया शुल्क भिजवायें।**

-व्यवस्थापक तपोभूमि मासिक

www.thearyasamaj.org

सुघड़ता, कार्य-कुशलता

लेखकः हरनामदास

ब्याही तो सभी कन्यायें जाती हैं और अपने-2 घर की मालकिन बन जाती हैं; परन्तु एक को सदा यश प्राप्त होता है और दूसरी को अपयश; एक को सुघड़, चतुर और कार्य-कुशल कहा जाता है, दूसरी को फूहड़ और मूर्खा; एक का हंसते-हँसाते जीवन व्यतीत होता है, दूसरी का रोते-रुलाते।

इतना अन्तर डालने वाला क्या गुण है? कार्य कुशलता। कार्य कुशलता या सुघड़ता ऐसा नहीं कि केवल स्त्रियों के ही काम का यह गुण हो। स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध, अमीर-गरीब, मालिक-नौकर, यहां तक कि पशुओं तक के कार्य कुशल होने में ही उनका सम्मान और उनका मूल्य है। जब किसी मनुष्य की बाबत कहा जाता है कि "वह कौड़ी काम का नहीं" तो उसका इतना कम मूल्य आंका जाना उसके कार्य कुशल न होने का ही बोधक है। घोड़ा अपने टांगे के कोचवान के ठीक इशारे के अनुसार और तेजी से चलने में कार्य कुशल है और इसी बात का अधिक मूल्य पाता है। पालतू बन्दर, कुत्ते, घोड़े, हाथी, ऊँट और बैल यह 6 पशु तो जितने अपने-2 कार्य में कुशल होते हैं। उतना अधिक सम्मान, प्रेम और मूल्य पाते हैं। फिर स्त्री पुरुषों के कार्य कुशल होने के तो क्या कहने?

छोटा बड़ा कोई भी कार्य हो, उसके दो भाग हुआ करते हैं-(एक) परिश्रम, (दूसरा) उसे उत्तम विधि से करना। आपने सड़क पर झाड़ू देने वालों को देखा होगा। कुछ तो ऐसी बुरी तरह झाड़ू देते हैं कि सब मिट्टी उड़-उड़कर उनके अपने सिर पर पड़ रही होती है और रास्ता चलतों के आंख मुंह कपड़े भी मिट्टी -2 कर दिये जाते हैं। दूसरे ऐसे सुन्दर ढंग से झाड़ू देते हैं कि किसी को शिकायत का मौका ही नहीं मिलता। किसी भले को पास से गुजरता देखकर हाथ रोक लेते हैं, साथ ही बहुत आदर और प्रेम से कह देते हैं "गुजर जाइये, बाबू जी! बहुत आराम से गुजर जाइये।" कौन है जो ऐसों को 'धन्यवाद' कहे बिना आगे जा सकेगा। इसी का नाम कार्य कुशलता और सुघड़ता है दोनों प्रकार के मेहतर झाड़ू देते हैं, परन्तु एक झाड़ सुनता है, दूसरा धन्यवाद। रोटी सब स्त्रियां पकाती हैं, परन्तु किसी की आधी जली आधी कच्ची, आधी अफ्रीका के आकार की, आधी आस्ट्रेलिया के आकार की; दूसरे प्रकार की स्त्रियां ऐसी गोल-2 पकायेंगी जैसे चौदहवीं का चांद, ऐसी कोमल और सुन्दर पकी हुई कि खाने वाला देख-देखकर भी हर्षित और खा-खाकर कर भी हर्षित। यही सुघड़ता है, यही कार्य कुशलता है। आप जो पुस्तक पढ़ रहे हैं, इसका एक-2 अक्षर छापेखाने के कम्पाजीटर जोड़-जोड़कर कम्पोज करते हैं। कई ऐसे हैं कि आठ-2 दस-2 पृष्ठ हाथ के हाथ कम्पोज कर दें, क्या मजाल कि कोई गलती होने पाये। उनके हाथ अक्षर उठाने बिठाने में ऐसे चलते हैं, मानो कोई कलाकार सितार पर हाथ चला रहा है। वे अच्छा करते हैं, अच्छा बोलते हैं, अच्छा सुनते हैं, और सैकड़ों रुपया कमाकर घर ले जाते हैं। इसके विपरीत दूसरे प्रकार के

www.thearyasamaj.org

कम्पाजीटर हैं, जिनकी पंक्ति-2 में गलती। आता को जाता कम्पोज कर, चुल्लू को उल्भू, रौनक को सैनिक, घास को मास, आस्तक को राक्षस, घर गया को मर गया, पुत्र को मूत्र और साक्षात् को पक्षपात कम्पोज कर डालें। एक कम्पाजीटर ने बहुत संकट में डाल दिया हमको, अब वह 'नहीं' शब्द कम्पोज़ करना भूल गया। लिखा था "पांच इन्द्रियों को वश में रखने वाला रोगी नहीं होता।' उसने कम्पोज कर दिया 'पांच इन्द्रियों को वश में करने वाला रोगी होता।' व्यवहार में भी ऐसा अकुशल कि मैनेजर से सदा तू तू मैं मैं। अपनी गलती तो माने नहीं, गलती बताने वाले से ही झगड़ पड़े। आखिर एक दिन कुछ ऐसी अक्षम्य भूल कर बैठा (विस्तार से क्या लाभ?) कि या तो तीन सौ रुपये प्रकाशक के भर देता, या चुपके से प्रेस से बाहर हो जाता। सो वह निकल गया। वह मूर्ख यदि कार्य कुशल व्यवहार कुशल होता तो न गलतियां करता, न झगड़े करता न अपनी रोजी पर आप लात मारता। यह है कार्य कुशल होने और कार्य कुशलता से हीन होने में अन्तर।

स्त्रियों के कार्य कुशलता का परिचय खाना बनाने, खाना परोसने, बर्तन साफ करने, सामान को ढंग से रखने, कपड़ा लत्ता संभालकर पहनने, संभाल कर रखने, घर का माथा, घर का आंगन, कमरे, रसोई आदि दर्शनीय बनाकर रखने, पति और बच्चों के खान पहरान, पढ़ाई-लिखाई आदि-2 अनेक कार्यों में प्रत्यक्ष नजर आता है। कार्य कुशल सुघड़ स्त्रियों की बात-2 में फुर्ती और चतुराई का परिचय मिलता है।

सौ गुणों में एक विशेष गुण सुघड़ स्त्री में यह होता है कि वह थोड़ा खर्च करके उसका लाभ अधिक उठाती है और उसका रहन-सहन ऐसा प्रतीत होता है कि मानो दुगना खर्च करती होगी, पर करती वह आधा है। वह सब वस्तु उपयुक्त समय के लिये सुरक्षित रखती है। मुरब्बा, अचार, पापड़, बड़ी, सेवीं, पुस्तक, खिलौने, बर्तन समय पर यूं निकाल लाती है कि क्या कहने? वह नये कपड़े को दिनों में ही नहीं मैला और पुराना कर छोड़ती, उसके चातुर्य का ही यह फल है कि वर्षों पीछे खरीदा हुआ कपड़ा अपनी पूरी शान के साथ वर्षों पीछे उसके ट्रंक से निकलता है। परन्तु इससे उलट फूहड़ स्त्री का यह हाल कि 'सब दिन चंगे, त्यौहार के दिन नंगे।' यही गुण ही तो है जो साधारण घर में जन्मी स्त्री को भी बड़ों से आदर दिलाता है और इस गुण का अभाव बड़ी पढ़ी लिखी वंशज स्त्री का तिरस्कार कराता है। कहा भी है-

आंख कान मुख नासिका सब जन के इक ठौर।
कहिबो करिबो देखिबो गुणियन के कुछ और।।

आप कार्य कुशल बनें। जन्म से न कोई सुघड़ है, न फूहड़। यदि एक गंवार कन्या पाठशाला में जाकर अक्षर-2 का अभ्यास करके पुस्तक पढ़ने योग्य हो जाती है, तो सभी स्त्रियां कार्य कुशलता की एक-2 बात दूसरों में देखकर उसी को अपने जीवन में ढालकर बहुत सुघड़ और कार्य कुशल बन सकती हैं। कार्य कुशलता का मूल है अच्छा बनने का शौक। शौक होने से ही इस ओर पूरा ध्यान दिया जा सकता है। लग्न तो प्रत्येक सफलता का अचूक मन्त्र है। सो कार्य कुशलता की लग्न सिर पर सवार रहनी चाहिये, बस फिर नौ निध, बारह सिद्ध समझें। ❁❁❁

www.thearyasamaj.org

बड़प्पन की नहीं, महानता की आकांक्षा जागृत करें

अधिकांश मनुष्य बड़प्पन के पीछे अन्धी दौड़ लगा रहे हैं और महानता की गरिमा भूलते चले जा रहे हैं। अहंता का पोषण करने वाले साधन जुटाने में जितनी रुचि दीख पड़ती है उतनी यदि दिव्यता के अभिवर्धन में लगी होती नर पशु से ऊँचा उठकर मनुष्य ने नर-रत्न और नर नारायण का पद प्राप्त कर लिया होता।

निर्वाह के लिए धन की आवश्यकता उचित है। पर जिनके पास गुजारे के लिए साधन मौजूद हैं वे संग्रह के पीछे क्यों पड़े हैं? जिनके पास पूर्व संग्रह आजीवन निर्वाह कर सकने जितना मौजूद है फिरे भी वे अधिक कमाई की हबिस में जुटे हैं, यदि वे इस दिशा में लगी अपनी क्षमता को लोक कल्याण में लगा सकें तो कितना अच्छा होता? गुजारे भर के लिए उपार्जन-संग्रह अनावश्यक बची शक्तियों का विश्व मानव के चरणों में समर्पण की नीति अपना अपना कर चला गया होता तो मनुष्य सन्तुष्ट भी रहता, अनाचार भी न करता और लोक कल्याण की दिशा में बहुत कुछ हो सकता होता।

परिवार पालन एक बात है और परिवार तक ही सीमित हो जाना उनके लिए नीति अनीति अपना कर बैठे खाते रहने जैसी पूँजी जुटाने में लगे रहना दूसरी बात। परिवार को सुसंस्कृत और स्वावलम्बी बनाना एक बात है और लाड़ दुलार में उनकी हर इच्छा पूरी करना दूसरी बात। माली की दृष्टि रखकर भगवान् का बगीचा परिवार-हम सँभालें सजायें इतना ही बहुत है। इन्हीं चन्द लोगों पर जीवन् सम्पदा को केन्द्रित और निछावर कर देना दूसरी बात है। परिवार के सम्बन्ध में हमारा दृष्टिकोण उलझा हुआ नहीं वरन् सुलझा हुआ स्पष्ट होना चाहिए।

ईश्वर व्यक्ति नहीं है। जिसे कुछ खिला पिलाकर, दे दिलाकर, कह सुनकर प्रसन्न किया जा सके। विश्व मानव विश्व वसुधा को ही भगवान का साकार रूप माना जाय और ईश्वर अर्पण, ईश्वर पूजन का व्यवहारिक स्वरूप लोक मंगल के लिए बढ़ चढ़कर अनुदान देने के रूप में प्रस्तुत किया जाय। अपने को अपने साधनों को ईश्वर का समझना ईश्वरार्पण करना इसका सीधा-साधा अर्थ है अपने को समाज की अविछिन्न एक इकाई भर मानना और जो कुछ योग्यता तथा सम्पदा है। उसे संसार को अधिक समुन्नत बनाने के लिए प्रत्यक्षतः समर्पण करना है। मन ही मन सब कुछ भगवान् को समर्पण करना और व्यवहार में पूरे कृपण कंजूस बने रहना यह ढोंग आत्मवादी को नहीं आत्म प्रवंचक को ही शोभा देता है। ईश्वर से प्रेम करना अर्थात् उत्कृष्टता से प्यार करना। ईश्वर पूजन अर्थात् उत्कृष्टता के अभिवर्धन में किये बिना सेवा और परमार्थ का व्रत लिए बिना सच्ची ईश्वर भक्ति न किसी के लिए सम्भव हुई है न आगे होगी। ईश्वर को एक प्राणी मानकर उसे बहलाने-फुसलाने के ढोंग रचते रहने वाले न भक्ति का स्वरूप समझते हैं और न उसका प्रतिफल प्राप्त करते हैं।

-शेष पृष्ठ सं.28 पर

www.thearyasamaj.org

जीवन का महत्व समझें और उसका सदुपयोग

मनुष्य विश्व का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। ईश्वर ने अन्य जीवों की तुलना में बहुत अधिक शक्तियाँ तथा सुख-सुविधाएं दी हैं। इसका एकमात्र कारण यही है कि ईश्वर चाहता है, हम आदर्शनिष्ठ जीवन जीयें, अपनी शक्तियों का सदुपयोग करें। जिस मनुष्य की रचना में परमात्मा ने अपने समस्त स्नेह और ममत्व को उड़ेल दिया है, जिसके निर्माण में उसने अपना पूरा क्रिया-कौशल दिखाया है-वह भी यदि पशुओं के समान शिश्नोदर जीवन जीता है तो इसे 'महती विनिष्ट' ही कहा जायेगा।

लाखों योनियों में भटकने के बाद प्राप्त हुई इस नरदेह को पाकर हमें इसके गौरव के अनुरूप ही चलना चाहिए। यह शोभा नहीं देता कि हम मनुष्यता को कलंकित करने वाल कुकर्म करें। तुच्छ विषय-भोगों में फंसकर अपने जीवन लक्ष्य को भुला बैठें। हंस नीर-क्षीर विवेकी होता है, हमें भी न्याय और अन्याय का अन्तर कर नीति तथा न्याय के पथ का ही अवलम्बन करना चाहिए। मानी चातक कितना भी प्यासा क्यों न हो? केवल स्वांति नक्षत्र का ही जल ग्रहण करता है। यदि हम में भी मनुष्यता का किंचित भी अभिमान हो तो यह व्रत लेना चाहिए कि चाहे अभावों भरा जीवन व्यतीत करना पड़े, परन्तु अनीति और अन्याय से न तो धन अर्जित करेंगे और न ऐसे धन का उपयोग करेंगे। मधुमक्षिका पुष्पों के आस-पास मंडराती रहती है, उनका सार ग्रहण करती है। हम भी उनकी भांति सज्जनों के समीप रहें तथा सद्विचारों को धारें।

जो जीवन मक्खियों की भाँति स्वार्थ-संकीर्णता की कीचड़ के ऊपर भिनभिनाने में व्यतीत होता है, उसे धिक्कार है। जो इन्द्रियों का दास बनकर रहता है, वह अपने जीवन को व्यर्थ ही गंवा रहा है। इस देह की सार्थकता तभी है, जब सात्विक तथा परोपकार की ज्योति से जगमगाता जीवन जिया जाये।

हम अपने जीवन को अनुकरणीय बनायें। सत्य और प्रेम हमारी साँस-साँस मे रमे हों। दया, सौजन्य, संयम, सेवा, और सहानुभूति हमारे आचार-विचार से पल्लवित पुष्पित हों-तभी सच्चे अर्थों में हम मानव कहलाने के योग्य हो सकते हैं।

हम शान्तिपूर्वक जियें और दूसरों को भी जीने दें। जो भूले भटके हैं, उन्हें जीवन का सही रास्ता दिखायें। उन्नति पथ पर जो चल रहे हैं, उन्हें आगे बढ़ने में सहयोग करें। स्वयं तो हम महान् बनें ही, दूसरों को भी महान् बनायें।

यह समस्त विश्व परमात्मा का ही काव्य है। वही समस्त प्राणियों में समाया हुआ है। मैं-तू, अपना-पराया, यह जो वैयक्तिक सत्ता का व्यामोह है, उचित नहीं है। जीवन का वास्तविक लक्ष्य है वैयक्तिक सत्ता में मिट जाना। इसी उद्देश्य की सिद्धि के लिए विषय वस्तु का ग्रहण यज्ञ भावना से करना है। संसार में असंख्य प्राणी हैं और सबको ही अपनी आवश्यकतायें पूर्ण करनी हैं। अतएव हमें भी अधिक

www.thearyasamaj.org

का लोभ न करते हुए अपनी आवश्यकता के अनुरूप ही ग्रहण करना चाहिए। उससे अधिक लेना तो पाप है, अनाधिकार चेष्टा है।

वस्तुतः लेने और देने, पाने और त्याग करने के विश्व नियम के अनुकरण में ही प्राणिमात्र का कल्याण सन्निहित है। त्याग ही भोग का आधार है। जो त्याग नहीं कर सकता उसे प्राप्ति का अधिकार भी नहीं। संसार की इस यज्ञशाला में त्याग की आहुति देकर हमें भी ईश्वरीय प्रयोजन (विराट् यज्ञ) में सहयोग देना चाहिए। ❁❁❁

पृष्ठ सं.26 का शेष–

भौतिक सम्पदाओं की इतनी भर आवश्यकता है जिससे अपना और अपने परिवार का पोषण हो सके दूसरों पर आतंक जमाने, आकर्षित करने और उन पर अपनी दृश्यमान विशेषताओं की छाप डालने की बाल–क्रीड़ा भावात्मक बचपन की निशानी है। रूप, श्रृंगार, कौशल, वैभव पद का प्रदर्शन करके केवल हेय अहंता का पोषण होता है।

आत्म–कल्याण और ईश्वर प्राप्ति के लिए देवत्व की महानता उपलब्ध करने के लिए अन्य मनस्क भाव से कुछ पूजा पत्री कर लेना पर्याप्त न होगा। वरन् उनके लिए मनोयोग वैभव और वर्चस्व का सर्वोत्तम अंश नियोजित करना पड़ेगा।

बड़प्पन के आकांक्षी महानता प्राप्त नहीं कर सकते हैं। महानता के उपासकों को बड़प्पन की अभिलाषा को नियंत्रित ही रखकर चलना होता है। ❁❁❁

महापुरुषों की जयन्ती

स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती	**2 फरवरी**
जानकी जन्म (सीताजी)	**6 फरवरी**
सन्त रविदास	**10 फरवरी**
सरोजिनी नायडू	**13 फरवरी**
रामकृष्ण परमहंस	**18 फरवरी**
स्वामी रामदास	**20 फरवरी**
स्वामी दयानन्द सरस्वती	**21 फरवरी**

1 फरवरी	बसन्त पंचमी
24 फरवरी	मूलशंकर (दयानन्द) बोधरात्रि

महापुरुषों की पुण्यतिथि

बालवीर हकीकत राय	**1 फरवरी**
कल्पना चावला	**1 फरवरी**
कन्हैयालाल मुंशी	**8 फरवरी**
पं0 दीनदयाल उपाध्याय	**11 फरवरी**
सुभद्राकुमारी चौहान	**15 फरवरी**
वासुदेव बलवंत फड़के	**17 फरवरी**
गोपालकृष्ण गोखले	**19 फरवरी**
कस्तूरबा गांधी	**22 फरवरी**
वीर सावरकर	**26 फरवरी**
चन्द्रशेखर आजाद	**27 फरवरी**
डॉ0 राजेन्द्रप्रसाद	**28 फरवरी**

www.thearyasamaj.org

सूफी अम्बाप्रसाद

सूफी जी का जन्म 1858 में मुरादाबाद में हुआ। आपका दाहिना हाथ जन्म से ही कटा था। आप हंसी में कहा करते थे 'अरे भाई, हमने सत्तावन में अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध किया, हाथ कट गया, मृत्यु हो गई। पुनर्जन्म हुआ। हाथ कटे का कटा आ गया।'

आपने मुरादाबाद, बरेली और जालन्धर आदि कई शहरों में शिक्षा पाई। एम.ए. पास कर लेने के पश्चात् आपने वकालत पढ़ी, परन्तु की नहीं। आप उर्दू के प्रभावशाली लेखक थे। आपने यही काम संभाला।

सन् 1890 ई0 में आपने मुरादाबाद से 'जाम्यलइलूम' नामक उर्दू साप्ताहिक पत्र निकाला। इसका प्रत्येक शब्द इनकी आन्तरिक अवस्था का परिचय देता था। वे हास्यरस के प्रसिद्ध लेखक थे। परन्तु उनमें गम्भीरता भी कम न थी। वे हिन्दू-मुस्लिम एकता के कट्टर पक्षपाती थे और शासकों की कड़ी आलोचना किया करते थे।

सन् 1897 में आपको राजद्रोह के अपराध में डेढ़ वर्ष का कारागार मिला। जब 99 में छूटकर आये तो उ0 प्र0 के कुछ छोटे-2 राज्यों पर अंग्रेज लोग हस्तक्षेप कर रहे थे। सूफी जी ने वहाँ के अफसरों तथा रेजिडेन्टों का खूब भण्डाफोड़ किया। आप पर मिथ्या दोषारोपण का अभियोग चलाया गया और सारी जायदाद जब्त कर छः साल का कारागार दिया गया। जेल में उन्हें अकथनीय कष्ट सहन करने पड़े। परन्तु वे तो धीर पुरुष थे, कभी विचलित न हुए।

सूफी जी जेल में बीमार पड़े। एक गलीज कोठरी में बन्द थे। उन्हें औषधि नहीं दी जाती थी। यहाँ तक कि पानी आदि का भी ठीक प्रबन्ध न था। जेलर आता और हँसता हुआ प्रश्न करता-'सूफी, अभी तक तुम जिन्दा हो?' खैर, ज्यों-त्यों कर जेल कटी और 1906 के अन्त में आप बाहर आये।

तत्पश्चात् सरदार अतीतसिंह भी छूटकर आ गये और सन् 1908 में 'भारत माता बुक सोसाइटी' की नींव डाली गई। इसका अधिकतर कार्य सूफी जी ही किया करते थे। आपने 'बागी मसीह' या 'विद्रोही ईसा' नामक एक पुस्तक प्रकाशित करवाई जो बाद में जब्त कर ली गई।

इसी वर्ष लोकमान्य तिलक पर अभियोग चलाया गया और उन्हें भी 6 वर्ष का कारागार मिला। तब देशभक्त मण्डल के सभी सदस्य साधु बनकर पर्वतों की ओर यात्रा करने के लिये निकल पड़े। पर्वतों के ऊपर जा रहे थे। एक भक्त भी साथ आया। साधु बैठे तो उस भक्त ने सूफी जी के चरणों पर शीश नवाकर नमस्कार किया। बड़ा जैन्टिलमैन था। खूब सूट बूट पहिने था। सूफी जी के चरणों पर शीश रक्खा और पूछने लगा-"बाबा जी, आप कहाँ रहते हैं?"

सूफी जी ने कठोर स्वर में उत्तर दिया-'रहते हैं, तुम्हारे सिर में।'

"साधु जी आप नाराज क्यों हो गये?"

www.thearyasamaj.org

''अरे बेवकूफ ! तूने मुझे क्यों नमस्कार किया? इतने और साधु भी तो थे, इनको प्रणाम क्यों न किया?'

''मैंने आपको ही बड़ा साधु समझा था।'

'अच्छा खैर, जाओ खाने-पीने की वस्तुएँ लाओ।'

वह कुछ देर पीछे अच्छे-अच्छें पदार्थ लेकर आया। खा-पीकर सूफी जी ने उसे फिर बुलाया और कहने लगे-'क्यों बे हमारा पीछा छोड़ेगा या नहीं?'' ''भला मैं आपसे क्या कहता हूँ जी? 'चालाकी को छोड़। आया है जासूसी करने जा, जा! अपने बाप से कह देना कि सूफी पहाड़ में गदर करने जा रहा है।

वह चरणों पर गिर पड़ा-'हुजूर, पेट की खातिर सब कुछ करना पड़ता है।'

आपने सन् 1909 ई में 'पेशवा' अखबार निकाला। उन्हीं दिनों बंगाल में क्रान्तिकारी आन्दोलन ने जोर पकड़ा। सरकार को चिन्ता हुई कि कहीं यह आग पंजाब का भी दहन न कर डाले। अस्तु दमन चक्र चलना आरम्भ हुआ। तब सूफी जी और सरदार अजीतसिंह और ज्याउलहक ईरान चले गये। वहाँ पहुँच कर ज्याउलहक की सलाह बदल गई। उसने चाहा इन्हें पकड़वा दूं तो कुछ इनाम भी मिलेगा और सजा भी न होगी। परन्तु सूफी जी ताड़ गये। उन्होंने उसे आगे भेज दिया। वह वहाँ रिपोर्ट करने गया और यह दोनों बच निकले।

ईरान में अंग्रेजों ने इनकी बहुत खोज की और उन्हें कई प्रकार के कष्ट सहन करने पड़े। कहा जाता है कि वे एक स्थान पर घेर लिये गये। वहाँ से निकलना असम्भव-सा हो गया। वहीं व्यापारियों का एक काफिला ठहरा हुआ था। ऊँटों पर बहुत से सन्दूक में सूफी जी तथा अजीतसिंह को बन्द किया गया और वहाँ से बचाकर निकाला गया।

फिर किसी अमीर के घर ठहरे। पता चल गया और वह घर घेर लिया गया। उसी समय उन दोनों को बुर्का पहिना जनाने में बिठा दिया गया। सब तलाशी ली गई और अन्त में स्त्रियों की भी तलाशी ली जाने लगी। एक दो स्त्रियों के बुरके उठाये भी गये, परन्तु मुसलमान लोग लड़ने मरने के लिये तैयार हो गये और फिर अन्य किसी स्त्री का बुरका नहीं उतारने दिया। इस तरह वे दोनों यहाँ से भी बचे।

पीछे उन्होंने वहाँ से 'आबेहयात' पत्र निकाला और राष्ट्रीय आन्दोलन में भी भाग लेने गये। सरदार साहब के टर्की चले जाने पर वहाँ का सारा कार्य इन्हीं के सर आ पड़ा और फिर ये वहाँ पर 'आका सूफी' के नाम प्रसिद्ध हुए।

सन् 1915 में जिस समय ईरान में अंग्रेजों ने बिल्कुल प्रभुत्व जमाना चाहा तो फिर कुछ उथल-पुथल मची थी। शीराज पर घेरा डाला गया। उस समय सूफी जी ने बाँये हाथ से रिवाल्वर चलाकर मुकाबला किया था, परन्तु अन्त में आप अंग्रेजों के हाथ आ गये। इन्हें कोर्ट-मार्शल किया गया। फैसला हुआ, कल गोली से उड़ा दिये जाओगे। सूफी कोठरी में बन्द थे। प्रातः समय देखा, वे समाधि की अवस्था में थे, परन्तु उनके प्राण पखेरू उड़ चुके थे। उनके जनाजे के साथ असंख्य ईरानी गये और उन्होंने बहुत शोक मनाया। कई दिन तक नगर से उदासी-सी छाई रही। उनके अन्तिम बोल थे-'वन्देमारतम्'

आज सूफी जी इस लोक में नहीं हैं, पर ऐसे देश भक्त का स्मरण कितना स्फूर्तिदायक है।❁❁❁

www.thearyasamaj.org

"राजपथ है बनाया दयानन्द ने"

रचयिता-शान्ती नागर, आगरा

राजपथ है बनाया दयानन्द ने,
हम चलें तो सही, हम बढ़ें तो सही।
न कहीं धूल है व्यर्थ सन्देह की,
न कहीं शूल है व्यर्थ भ्रम के यहाँ।
मिथ्या आश्वासनों के नहीं गर्त हैं,
कर्म काण्डों के दुर्गम न टीले यहाँ।
लोभ लालच की फिसलन न इस पथ पर है,
और अज्ञान का है अँधेरा नहीं।
है उजाला-उजाला यहाँ ज्ञान का,
और सत्कर्म का शुभ सवेरा यहीं।
जागरण शंख फूँका दयानन्द ने।
हम जगें तो सही, हम उठें तो सही॥
विश्व बन्धुत्व की स्नेह सरिता बहे,
ज्ञान और कर्म के तट हैं सुन्दर यहाँ।
कोई ऊँचा नहीं कोई नीचा नहीं,
साथ मिलकर चलें यह नियम है यहाँ।
हैं सदाचार के दिव्य तोरण लगे,
हर मनुज का यहाँ स्वागतम् स्वागतम्।
यज्ञ के धूम करते सुवासित इसे,
मन्त्रध्वनि के यहाँ आगमन आगमन।
वेद वीणा बजायी दयानन्द ने,
हम सुनें तो सही कुछ गुनें तो सही॥
वेद पढ़ना पढ़ाना परम धर्म है,
हम ने रट तो लिया किन्तु जाना नहीं।
सृष्टिकर्ता अजन्मा निराकार है,
सर्वव्यापक है प्रभु हमने माना नहीं।
हर अँधेरे में करता उजाला प्रभू,
हर ठोकर पै हमको सहारे सदा।
हर चुभन को दुलारे बड़े प्यार से,
आत्म कल्याण हित नित संवारे सदा।
ऐसा अमृत पिलाया दयानन्द ने,
हम पियें तो सही और जियें तो सही॥
मुख से कहते रहे दूर दुरितानि हों,
और दुरितों से हम मेल करते रहे।
'यह हमारा नहीं"यह हमारा नहीं'
मात्र वाणी से हम खेल करते रहे।
क्लेश की खाइयाँ और बढ़ जायेंगी,
कुछ रहेगा नहीं कुछ बचेगा नहीं।
आचरण का अगर सीख लें व्याकरण,
शान्ति-समृद्धि सरिता बहेगी यहीं।
ऐसी नीति सिखाई दयानन्द ने,
हम गहें तो सही कुछ करें तो सही॥

❁❁❁

वधू चाहिए

किशनकुमार, जन्मतिथि 01/12/1974 खत्री गोत्र, रंग गोरा, वजन 55 किलोग्राम, लम्बाई 5' 4", कपड़े की दुकान, मासिक आय 15 हजार रूपये प्रतिमाह हेतु गृह कार्य में दक्ष वधू चाहिए। सम्पर्क करें- **टीकमचन्द खत्री, बी-18, गुरूनानक नगर, मथुरा (उ0 प्र0) मोबा. 9267260120**

www.thearyasamaj.org

त्रिविध ब्रह्मचर्य

लेखकः लक्ष्मणनारायण गर्दे

कायेन मनसा वाचा, सर्वावस्थासु सर्वदा।
सर्वत्र मैथुन–त्यागो, ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते।। –(महामुनि याज्ञवल्क्य)

शरीर, मन और वचन से सब अवस्थाओं में, सर्वदा और सर्वत्र मैथुन (सम्भोग) त्याग के नाम को ब्रह्मचर्य कहा जाता है।

महामुनि, याज्ञवल्क्य के मत से कायिक, मानसिक और वाचिक–ये तीन प्रकार के ब्रह्मचर्य होते हैं। इन तीनों के समूह का नाम 'सम्पूर्ण ब्रह्मचारी होने के योग्य है।

1–कायिक ब्रह्मचर्य–हाव, भाव एवं कटाक्ष, चुम्बन, आलिंगन, अंगमर्दन तथा उपस्थेन्द्रिय के संचालन से सब प्रकार पृथक् रहने को कहते हैं।

2–मानसिक ब्रह्मचर्य–विषय–चिन्तन, सम्भोग के मनोरथ कामोद्दीपन साधनों की भावना एवं विकारों के संग्रह को भली–भांति त्याग देना ही माना गया है।

3–और वाचिक ब्रह्मचर्य– प्रेमालाप, विषय सम्बन्धी चर्चा, गुह्य सम्भाषण एवं हृदय में काम–विकार उत्पन्न करने वाली चातुर्य–पूर्ण कथा से विरक्त रहने का नाम है।

बहुत से लोग ऐसे हैं, जो कायिक ब्रह्मचर्य का पालन करने पर भी मानसिक और वाचिक का पालन नहीं कर सकते। वे समझते हैं कि कायिक पाप ही पाप है। मानसिक और वाचिक पाप,पाप नहीं। यही कारण है कि वे कुछ ही दिनों में कायिक ब्रह्मचर्य को भी छोड़ बैठते हैं। हमारे विचार से कायिक ब्रह्मचर्य का रूप बहुत स्थूल है। इसके पालन में इतनी कठिनता नहीं, जितनी कि मानसिक और वाचिक के पालन में है।

हमारे विचार से 'मानसिक' ब्रह्मचर्य उत्तम, 'वाचिक' मध्यम और 'शारीरिक' अधम है। मन, वचन और कर्म का आपस में बड़ा घन्ष्ठि सम्बन्ध है।

कुछ लोग ऐसे हैं, जो विचारते हैं कि वाचिक ब्रह्मचर्य में क्या धरा है? उसके छोड़ने से कुछ हानि नहीं हो सकती। ऐसी धारणा कर, वे वास्तव में मूर्खता करते हैं। वाचनिक ब्रह्मचर्य के बिगड़ने से कायिक ब्रह्मचर्य भी निस्सन्देह नष्ट हो जाता है। जो वाचनिक ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर सकता है, भला वह कायिक का पालन कैसे कर सकेगा?

बहुत से लोग मनोविज्ञान का महत्व न जानकर, मानसिक ब्रह्मचर्य की अवहेलना करते हैं। वे यह नहीं जानते कि मन की ही प्रेरणा से पांचों ज्ञानेन्द्रियाँ काम करती हैं। वह इस शरीर का राजा है। वह जिस अवयव को चाहता है, उसे उसके विषय में तत्काल लगा देता है।

www.thearyasamaj.org

मानसिक ब्रह्मचर्य की प्रधानता

यन्मनसा मनुते तद्वाचावदति,
यद्वाचा वदति तत्कर्मणा करोति,
यत्कर्मणा करोति तदभिसम्पद्यते। -(यजुर्वेद ब्राह्मण)

जिसका मन में चिन्तन किया जाता है, वही वाणी से निकलता है, जो कुछ वाणी से निकलता है, वही कर्म किया जाता है और जैसा कुछ कर्म किया जाता है, वैसा उसका फल भी मिलता है।

ऊपर के मन्त्र में मन की स्पष्ट रूप से प्रधानता दिखलाई गई है। मन का ही अधिकार वचन और कर्म पर है। मानसिक विकार ही वाचिक और कायिक विकारों का मूल है। अतएव मानसिक ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला पुरुष ही वाचिक और कायिक ब्रह्मचर्य पाल सकता है। बहुत उचित कहा गया है-

"मन एव मनुष्याणां, कारणं बन्धमोक्षयोः।"

मनुष्य के बन्धन और मोक्ष का कारण, उसका मन ही है। सबसे पहले मन की ही साधना की जाती है। जिसका मन सध गया है, उसका वचन और शरीर पर भी अधिकार हो जाता है। जिसका मानसिक ब्रह्मचर्य छूट जाता है, उसका वाचिक और कायिक भी स्वयं छूट जाता है। इसीलिये मानसिक ब्रह्मचर्य भी और कायिक ब्रह्मचर्य भी स्वयं सध जाता है।

मानसिक ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में एक पौराणिक आख्यायिका है। वह हमारे विचार से रहस्यमयी और शिक्षा-दायिनी है-

एक समय पितामह ब्रह्माजी तपोवन में जाकर तपस्या करने लगे। इस अनुष्ठान में उन्हें लगभग 3000 वर्ष बीत गये। यह दशा देखकर देवों के राजा इन्द्र को अत्यन्त द्वेष और भय हुआ। उन्होंने समझा कि कहीं ऐसा न हो कि तप सिद्ध होने पर, हमारे इन्द्रासन की मर्यादा हीन हो जाय। अतः उन्होंने तिलोत्तमा नाम की एक अप्सरा को तपोभंग करने को भेजा। वह अप्सरा तपोवन में आकर अपना हाव, भाव और कटाक्ष करने लगी। यह दृश्य देखकर ब्रह्माजी के मन में विकार उत्पन्न हो गया। वह जिधर-2 जाती थी, वे भी उधर-उधर कामदृष्टि से उसे देखते थे। इसके अनन्तर वह इन्द्र के पास लौट आई। पर ब्रह्माजी अपने मानसिक ब्रह्मचर्य से पतित होने के कारण, अपने तीन सहस्र वर्ष की तपस्या के फल से हाथ धो बैठे !

इस आख्यायिका के पढ़ने से पाठक समझ गये होंगे कि मानसिक ब्रह्मचर्य ही प्रधान ब्रह्मचर्य है। जब ब्रह्माजी जैसे दिव्य पुरुष को मानसिक ब्रह्मचर्य के छोड़ने से पतित होना पड़ा, तो फिर हम लोग तो साधारण जीव हैं। अतः मानसिक ब्रह्मचर्य का भली भांति पालन करने वाला ही सच्चा ब्रह्मचारी है।

हमने जहाँ तक कथा-पुराणों में देखा है, सर्वत्र ही इस मानसिक ब्रह्मचर्य को कायिक और वाचिक का मूल माना गया है।

www.thearyasamaj.org

ब्रह्मचर्य से विद्याध्ययन

"**विद्यया विन्दतेऽमृतम्।** -(मुण्डकोपनिषद्)

विद्या के प्रभाव से परमानन्द मिलता है।

ब्रह्मचर्येण विद्या, विद्यया ब्रह्मलोकम्। -(अथर्व-संहिता)

वीर्य-रक्षा के द्वारा ही विद्या प्राप्त होती है और विद्या के मिलने से ही मनुष्य ब्रह्मलोक का सुख पाता है।

ऊपर के मन्त्र में यह बात कही गई है कि ब्रह्मचर्य ही विद्या का मूल है। बिना ब्रह्मचर्य के विद्या की उपलब्धि नहीं हो सकती, जो वास्तव में सत्य है।

ब्रह्मचर्य और विद्या में वृक्ष और शाखा के समान सम्बन्ध है। यही कारण है कि ब्रह्मचर्य के द्वारा ही विद्या के अध्ययन करने का नियम प्रचलित किया गया था। ब्रह्मचारी लोग ब्रह्मचर्य की अवस्था में ही वेद-वेदांगों का अभ्यास कर लेते थे और जब तक विद्या प्राप्त नहीं हो जाती थी, गृहस्थाश्रम में पैर नहीं धरते थे।

जो विद्या ब्रह्मचर्य के द्वारा गृहीत होती है, वह कभी स्खलित नहीं होती। वीर्य के प्रभाव से ज्ञान के गूढ़ तत्वों का शीघ्र ही हृदयंगम हो जाता है। विद्यार्थी की धारणा-शक्ति सदा जागृत और तीव्र रहती है, जिससे कि वह थोड़े ही अभ्यास से विशेष लाभान्वित होता है। जो लोग ब्रह्मचर्ययुक्त विद्याध्ययन करते हैं, वे ही उच्च तथा यशस्वी विद्वान् बन सकते हैं और उन्हीं की विद्या में वैज्ञानिक, आध्यात्मिक, तथा गणित सम्बन्धी नवीन-नवीन आविष्कार करने की शक्ति उत्पन्न होती है।

"**विद्यार्थं ब्रह्मचारी स्यात्।**" -(महात्मा विदुर)

विद्याध्ययन करने के ही लिये ब्रह्मचारी बनना चाहिये। इसी सिद्धान्त को लेकर बहुत से विद्यार्थी आजन्म ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं।

अब हम पाठकों को ब्रह्मचर्य से विद्या के अध्ययन में क्यों सफलता मिलती है? इस सम्बन्ध की एक रोचक आख्यायिका सुनाते हैं-

एक दिन देवर्षि नारद अमरावती में इन्द्र के पास उनसे मिलने गये। वहाँ वे उनसे मिलकर बड़े प्रसन्न हुये। इन्द्र किसी स्थान की वेद की कई ऋचायें भूल गये थे। अतः उन्होंने चतुरता से पूछा कि अमुक स्थान की ऋचा कैसे है? इस पर नारद जी ने सस्वर उन मन्त्रों का पाठ कर सुनाया। तब इन्द्र को आश्चर्य हुआ और उन्होंने कहा कि अब रहने दीजिये, काम हो गया। मैं तो आपकी परीक्षा ले रहा था। यह बात सुनकर, नारद जी अत्यन्त रुष्ट हुए और उन्होंने कहा कि तुम्हें एक ब्रह्मचारी की परीक्षा करने में लज्जा नहीं आई। भला ब्रह्मचारी की विद्या कभी तुम्हारी तरह नष्ट हो सकती है। मुझसे कहीं की भी ऋचा पूछ सकते हो! यदि फिर कभी ऐसा दुस्साहस कर, किसी ब्रह्मचारी की परीक्षा करोगे, तो अवश्य ही इन्द्रासन से पतित हो जाओगे। इस बात से इन्द्र भय के मारे काँपने लगे और बड़ी प्रार्थना कर क्षमा माँगी और नारद जी वहाँ से चले गये। ❀

www.thearyasamaj.org

श्री गुरु विरजानन्द आर्ष गुरुकुल वेदमन्दिर, मथुरा
में
ऋषि बोधोत्सव पर

51 कुण्डीय यज्ञ का भव्य आयोजन
दिनांक 24 फरवरी 2017

सज्जनो!

प्राय: सांसारिक बन्धनों में जकड़े गृहस्थ जीवन में व्यक्ति मनुष्य जीवन के वास्तविक उद्देश्य से विमुख हो जाता है। अज्ञानतावश अपने ही विपरीत कर्मों से दु:खों के द्वार खोल लेता है। इस बात को ध्यान में रखकर सर्वजन के हितचिन्तक ऋषियों ने सबके कल्याण की भावना से अनेक प्रकार के यत्न किये हैं। उन प्रयत्नों में ही धार्मिक आयोजनों की योजना रखी। इन धार्मिक आयोजनों के बहाने से व्यक्ति समय निकालकर यज्ञादि शुभ कर्म में प्रेरित हो जाता है। विद्वानों के उपदेश सुनकर अपना कल्याण करने में समर्थ हो जाता है। इसी भावना से प्रेरित होकर आपके अपने ही श्री गुरु विरजानन्द आर्ष गुरुकुल, वेदमन्दिर, मथुरा में प्रतिवर्ष महाशिवरात्रि पर्व ऋषि बोधोत्सव के रूप में मनाया जाता है। 51 कुण्डीय यज्ञ भी सर्वकल्याण की कामना से रखा जाता है। आप भी इस पावन अवसर पर सपरिवार यजमान के रूप में पधारें ऐसी हमारी कामना है। अति सुन्दर हो यदि आप भारतीय वेश-भूषा में आयें। यजमान बनने के इच्छुकजन अपने साथ घी, कटोरी, कपूर, दियासलाई, चम्मच, लोटा अवश्य लायें, जिससे यज्ञ करने में सुविधा हो। यदि न ला सकें तो यह व्यवस्था यहाँ भी रहेगी। 24 फरवरी 2017 शुक्रवार को प्रात: 8 बजे यज्ञस्थल पर अवश्य आ जायें। यज्ञ के बाद भण्डारे की व्यवस्था है प्रसाद भी यहीं ग्रहण करें। पुन: नगर कीर्तन 2 बजे से शोभायात्रा के रूप में होगा। अत: इस पावन सुअवसर को हाथ से न जाने दें।

कर यज्ञ यथावत दान करे, फल सौगुन होय ऋषि बतलाते।
दु:ख दूर करे दुखिया जन के, उसके करता सुख-साधन पाते।
सद्पात्र विचार करे धन दान, मिलें फल जो न कभी मिट पाते।
सब प्राणिन को भय हीन करे, उसके फल की गणना न बताते।।

उत्सव की सफलता का दायित्व आप सभी याज्ञिक जनों पर है। अत: सभी सांसारिक कार्यों को विराम देकर आयोजन को सफल बनाकर पुण्य के भागी बनें।

निवेदक:

(प्रधान)	(मंत्री)	(अधिष्ठाता)
डॉ0 सत्यप्रकाश अग्रवाल	**बृजभूषण अग्रवाल**	**आचार्य स्वदेश**

www.thearyasamaj.org

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण (सजिल्द)	220.00	भ्रांति दर्शन	20.00
शुद्ध रामायण (अजिल्द)	170.00	दयानन्द और विवेकानन्द	15.00
शंकर सर्वस्व	120.00	इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	12.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00	बाल मनुस्मृति	12.00
नारी सर्वस्व (प्रेस में)		ओंकार उपासना	12.00
शुद्ध कृष्णायण	50.00	शुद्ध सत्यनारायण कथा	10.00
शुद्ध हनुमच्चरित	60.00	दादी पोती की बातें	10.00
विदुर नीति	40.00	क्या भूत होते हैं	10.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	40.00	आर्यों की दिनचर्या	10.00
चाणक्य नीति	40.00	महाभारत के कृष्ण	8.00
महाभारत के प्रेरक प्रसंग	40.00	ब्रजभूमि और कृष्ण	8.00
नित्य कर्म विधि	32.00	सच्चे गुच्छे	8.00
वेद प्रभा	30.00	मृतक भोज और श्राद्ध तर्पण	8.00
शान्ति कथा	30.00	वृक्षों में जीव है या नहीं	5.00
संगीत रत्नाकर प्रथम भाग	25.00	गायत्री गौरव	5.00
यज्ञमय जीवन	30.00	महर्षि दयानन्द की मान्यतायें	5.00
दो बहिनों की बातें	30.00	सफल व्यक्तित्व	5.00
दो मित्रों की बातें	30.00	सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ	5.00
चार मित्रों की बातें	20.00	मुक्ति प्रदाता त्रिवेणी	5.00
भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	20.00	जीजा साले की बातें	5.00
मील का पत्थर	20.00	भारत और मूर्ति पूजा (प्रेस में)	

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2017 के लिये वार्षिक शुल्क 150/- रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 1500/- भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक-पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में,

....

....

....

... .

.... पिन कोड ....

पत्र व्यवहार का पता :-
व्यवस्थापक - कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर- गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग
(आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास,
मथुरा (उ० प्र०) 281003
फोन (0565) 2406431
मोबाइल- 9759804182

Yogendra # 9927136600

स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए रमेश प्रिन्टिग प्रेस, पंचवटी, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित